अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ✠ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ✠ एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–१६ ✠ राजघाट, काशी ✠ शुक्रवार, १८ जनवरी, '५७

आवाहन !

···भिक्षुओ ! जितने भी दिव्य अथवा मानुष-बंधन हैं, मैं उन सबसे मुक्त हूँ। तुम भी सभी दिव्य और मानुष-बंधनों से मुक्त हो जाओ। भिक्षुओ, बहुत जनों के हित के लिए, बहुत जनों के सुख के लिए, देवताओं और मनुष्यों के प्रयोजन के लिए, सुख के लिए, हित के लिए विचरण करो। भिक्षुओ ! आदि में कल्याणकारक, मध्य में कल्याणकारक तथा अन्त में कल्याणकारक धर्म का उपदेश करो। अर्थसहित, व्यंजन-सहित, परिपूर्ण, परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का प्रकाश करो। ऐसे भी प्राणी हैं, जिनके मन अधिक मलिन नहीं। धर्म के न सुनने से उनकी हानि होगी। सुनने से वे धर्म के जानने वाले बनेंगे।

—भगवान् बुद्ध

सियार से घोड़ा कैसे बना !

(विनोबा)

एक जमाना था, जब इस देश में लोग नयी-नयी तपस्याएँ करते थे। हिन्दुस्तान में बहुत पुराने जमाने से धर्म-विचार दृढ़ हुआ है। धर्म की सत्ता लोगों के दिल और दिमाग पर हमेशा रही है। आज भी वह कुछ तो है ही। पर धर्म केवल ग्रंथों में नहीं बनता। उन ग्रंथों का असर जनता पर होता है और नये-नये विचार निकलते हैं। जैसे-जैसे नये-नये विचार निकलते हैं, वैसे-वैसे लोगों के सामने तपस्या के नये-नये प्रकार खड़े होते हैं। तपस्या का मतलब यह नहीं है कि बारीश में या धूप में खड़े रहें। समाज की शुद्धि के लिए और उन्नति के लिए जो मेहनत करते हैं, उसे तपस्या कहते हैं। इस तरह के समाज-शुद्धि के नये-नये आंदोलन अपने देश में बहुत हुए। उन आंदोलनों को चलाने के लिए महापुरुष भी यहाँ पैदा हुए। इस प्रकार भारत का कुल इतिहास ऐसे समाज-शुद्धि के आंदोलनों से भरा है।

इस गाँव में एक हजार साल पहले एक महापुरुष हो गया और उसका असर सारे समाज पर हुआ। वे भी एक साम्राज्य के प्रधान मंत्री थे। लेकिन उन्होंने देखा कि प्रधान मंत्री रह कर देश की बहुत सेवा नहीं कर सकते। कुछ लोगों को सुख पहुँचा सकते हैं, परंतु समाज-जीवन बदलने की बात राजसत्ता से तो नहीं हो सकती! उन्होंने जब यह देखा, तब वह काम छोड़ दिया और फकीर बन गये। जैसे बुद्ध ने राज्यपद छोड़ कर जनसेवा का व्रत लिया, वैसे ही माणिक्यवाचकर ने प्रधान मंत्री का पद छोड़कर जनसेवा का व्रत लिया। इसलिए दूसरे असंख्य राजाओं व मंत्रियों की तुलना में समाज पर उनका असर ज्यादा हुआ। उनके बारे में कहा गया है कि उनके लिए भगवान् ने सियारों के घोड़े बनाये! सियार राजनीति से काम करने वाले और शेर वीर होते हैं, सियार कूटनीतिज्ञ होते हैं! पर जब माणिक्यवाचकर ने देखा कि इन कूटनीतिज्ञों से हिंदुस्तान के जीवन पर कुछ असर नहीं होता, तब उन्होंने परमेश्वर से प्रार्थना की कि ऐसे सियारों से मतलब नहीं सधता। जब उनके ध्यान में यह बात आयी, तो उन्होंने स्वयं राज्य छोड़ दिया और वेगवान समाज-सेवक बने। वे फिर तमिलनाड़ भर घूमते रहे। उनका इसके आगे का जीवन बहुत वेगशाली जीवन था। पॉलीटिक्स की जो कुशलता मानी जाती है, वह सब छोड़ कर केवल समाज की सेवा करने वाले घोड़े के समान वे बन गये। उनकी संगति से राजनीति का खयाल दूसरे लोगों ने भी छोड़ दिया। वे लोकनीति में लगे होंगे। सियार के घोड़े कैसे बने, इसकी यह कहानी है।

युगधर्म : करुणा

भगवान् बुद्ध देव 'दुनिया के प्रश्नों का हल कैसे निकलेगा,' इसका चिंतन करने के लिए निकले। उन्होंने चालीस उपवास किये। हड्डियाँ तक निकल आयीं। चालीस उपवास के बाद उन्हें अंतःप्रकाश प्राप्त हुआ और उनकी आँखें खुल गयीं। उन्होंने चारों तरफ—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण की ओर देखा।

एक बाजू उन्हें करुणा का दर्शन हुआ, दूसरी बाजू में उन्होंने मैत्री देखी, तीसरी बाजू में आनंद देखा और चौथी बाजू में उपेक्षा देखी, तब वे शांत हो गये। उन्होंने कहा, "दुनिया का मसला हल करने की चाबी हाथ में आ गयी। कारुण्य का उदय होना चाहिए। सर्वत्र मैत्री-भाव बढ़ना चाहिए। दूसरे का सुख देख कर आनंद होना चाहिए। दूसरा बुराई करता है, तो चिंता नहीं करनी चाहिए। कुल मिला कर करुणा का दर्शन होना चाहिए।

बुद्ध देव के हृदय में करुणा का उदय हुआ। उसीका प्रचार करते-करते वे चालीस साल घूमते रहे।

मेलूर, मदुरा, ६-१-'५७ —विनोबा

हम भी चाहते हैं कि अपने देश में यह चमत्कार फिर से हो। सियार का घोड़ा कैसे बनता है? अकल की बात छोड़नी पड़ती है और हाथ से सेवा करनी होती है। माणिक्यवाचकर ने स्वयं लिख रखा है कि अब इसके आगे हम नहीं चाहते कि हमें विद्वान लोगों की संगति मिले! उनका चातुर्य और कल्पना काफी हो गयी। अभी तक तो खूब चला, इसके आगे अब सियार का काम नहीं चाहिए। उन्हें बिल्कुल विरक्ति आ गयी और उन्होंने ईश्वर का आधार लिया। बार-बार उन्होंने कहा है कि ईश्वर मेरे हृदय में आकर बसा है और वह स्वयं काम करता है। यह जो राजनीति का त्याग, ऐश्वर्य का त्याग, समाजसेवा में लगन और फिर सुन्दर भजन हैं; इन सबका असर तमिलनाड़ के समाज पर आज तक है।

तेलगु के 'पोतना' भी अपना खेती का काम करते-करते प्रसिद्ध भागवत लिखाते थे। वे आखिर तक किसान रहे। जब किताब पूरी हुई, तब किसी ने कहा, यह किताब राजा को अर्पण करनी चाहिए। उन्होंने कहा, मैं कृष्ण भगवान् की गाथा गा रहा हूँ। क्या वह राजा को अर्पण करूँ? उन्होंने इन्कार किया। राजा की नाराजी की उन्होंने परवाह नहीं की। अगर वे राजा को अर्पण करते, तो राजा की अकेडमी से उन्हें कुछ इनाम भी मिलता। राजा-महाराजा लोग कवियों को आश्रय देने में बड़े प्रवीण होते हैं। आजकल भी दिल्ली में और राजदरबार में वे प्रतिष्ठा पाते, उन्हें भी पुरस्कार मिलता। परन्तु उन्होंने कहा कि यह भी मुझे नहीं चाहिए। वे पहले से आखिर तक किसान ही रहे। राजा का आश्रय उन्होंने नहीं लिया। लेकिन राजा की हालत, सत्ता की हालत उन्होंने दूर से देखी थी कि लोगों पर ये लोग सत्ता तो चलाते हैं, परंतु लोगों के हृदय में वे परिवर्तन नहीं ला सकते। इसलिए पोतना अलिप्त ही रहे। माणिक्यवाचकर तो प्रधान मंत्री ही थे, उनके हाथ में भी सत्ता थी। इन दिनों साधारण एम. एल. ए. के लिए भी लोगों में द्वेष और मत्सर पैदा होता है। क्या वह वहाँ इंद्रासन पर बैठने वाला है? परंतु उसके लिए भी होड़ चलती है। परंतु माणिक्यवाचकर के हाथ में पूरी सत्ता थी, तो भी उससे कुछ नहीं बनता, यह उन्होंने पहचाना, अनुभव किया, इसलिए सारा छोड़ दिया।

ऐसी ही कहानी महाराष्ट्र में संत तुकाराम की है। शिवाजी महाराज ने सुना कि तुकाराम कीर्तन करते हैं। शिवाजी महाराज एक दिन तुकाराम का कीर्तन सुनने आये। सुन कर वे बहुत खुश और प्रसन्न हुए। चंद दिनों के बाद उन्हें लगा कि तुकाराम का सत्कार करना चाहिए। शिवाजी भी बड़े महापुरुष हो

www.vinoba.in

गये। उनकी तरफ से घोड़े-पालकी वगैरा तुकाराम के सत्कार के लिए आयी। तुकाराम ने जब यह देखा कि राजा का सत्कार आ रहा है, तब उन्हें तीव्र वेदना हुई, मानो बिच्छू काट गया हो। उन्होंने फिर भगवान् से प्रार्थना की, "तुम यह क्या ला रहे हो! मैंने क्या पाप किया!" इस तरह उन्होंने भी पहचान लिया था कि सत्ता से जनता पर दबाव आता है और अच्छाई के बदले बुराइयाँ पैदा होती हैं। माणिक्यवाचकर ने भी सत्ता का जो त्याग किया और सियार का घोड़ा बनाया, उसका बहुत परिणाम तमिलनाड़ पर हुआ है। परंतु खूबी यह है कि हमने कुछ त्याग किया है, यह भास उन्हें नहीं था। उन्हें यही भास होता था कि सारा भगवान् ने किया, मैंने सिर्फ भगवान् का नाम लिया। जिसे लोग तपस्या कहते हैं, वह मैंने नहीं की। मनुष्य के सामने कोई आदर्श है और उसके लिए उसे तपस्या करनी होती है, तो उसका भान मनुष्य को नहीं होता है।

आज बाबा को सर्वोदय का परम ध्येय, परम साम्य घुमा रहा है। पर तपस्या का कोई भास हमें नहीं होता। लोग कहते हैं, 'तप, तप, तप।' बाबा कहता है, 'जप, जप, जप।' यह जप लोक-हृदय में परिवर्तन करने वाला है। और, हमारा विश्वास है, ऐसी नयी नयी तपस्या होती रहेगी, तभी प्राचीन काल का वैभव प्रकट होगा। अगर यह नहीं चलेगी, तो वह प्रकट नहीं होगा।

आज हालत यह है कि लोगों ने सारा धर्मकार्य मठों पर, मंदिरों पर और समाज-सेवा-कार्य प्रतिनिधियों पर सौंप दिया है। लोग उनको चुन कर देते हैं और कहते हैं कि काम तुम करो। समाज-सेवा भी दूसरे के जिम्मे करते हैं और धर्म-सेवा भी! लोगों ने अपने हाथ क्या रखा? खाना, पीना, भोग भोगना। क्या यह भी कोई मानवी जीवन है? यह तो जानवर का जीवन है। जब से राज्यसंस्था पैदा हुई और प्रतिनिधि चुनना शुरू हुआ, लोग और भी आलसी बनने लगे। डेमोक्रेसी आयी, वह भी नाम-मात्र की। लोगों को अपनी शक्ति का भान नहीं हुआ, बल्कि भेद ही बढ़ गये।

फिर इस सेवा से आरंभ करके व्यवस्थापक के रूप में सत्ता में गये। इस तरह सेवक पहचानते नहीं कि वे कहाँ से कहाँ गये। माणिक्यवाचकर ने बिलकुल उलटी राह दिखायी। कहा, सेवा करनी चाहिए। फिर सेवा-करते करते ध्यान में आया कि सेवा के लिए भक्ति चाहिए। सेवा से चले भक्ति की ओर तो मालूम हुआ, उसमें भी अहंकार है, जो काम का नहीं है। इसलिए बोले मुक्ति चाहिए। अहंकार से मुक्ति की ओर गये। जब तक अहंकार से मुक्ति नहीं मिलेगी, भक्ति से कुछ नहीं होगा। यह जो सेवा है, वह एक बड़ी वेटिंग रूम (प्रतीक्षालय) है। इस सेवा की एक बाजू से गाड़ी जाती है व्यवस्था और सत्ता की ओर, दूसरी बाजू से गाड़ी जाती है भक्ति और मुक्ति की ओर। हिंदुस्तान में सेवकों की विचित्र हालत है। यहाँ कुछ सेवकों का मुख है, व्यवस्था और सत्ता की ओर। मेरे जैसे पागल भक्ति और मुक्ति का रास्ता लेते हैं। माणिक्यवाचकर की यह खूबी है कि उसे व्यवस्था और सत्ता का पूरा अनुभव था और उसमें से कुछ नहीं निकलता, सियार सियार ही रहते हैं, यह उन्होंने देखा; इसलिए उसका त्याग किया। एक बाजू का अनुभव लेकर व उसे निकम्मी समझ कर वे निकले, इसलिए कि वे दूसरी बाजू की बहुत कीमत समझते थे।

ऐसी ही एक मिसाल इन दिनों हुई है। उड़ीसा में नवकृष्ण चौधरी चीफ-मिनिस्टर थे। उनका काम चलता था। सबका आग्रह था, इसलिए वे चीफ-मिनिस्टर बने रहे। आखिर देखा, जन-समूह का हृदय बदलने की बात उसमें नहीं है, उस मार्ग से लोक-हृदय में परिवर्तन नहीं ला सकते। इसलिए वह छोड़ कर वे अब भक्ति और मुक्ति के मार्ग में लगे हैं।

माणिक्यवाचकर की मिसाल बहुत बड़ी है। उस मिसाल से हमें बहुत कुछ सीखना है। किसी प्रकार भी मन में कभी नहीं आना चाहिए कि मेरी सत्ता दुनिया में चले। मेरी सत्ता नहीं चलनी चाहिए। सत्ता चलाने वाली एक शक्ति दुनिया में है। उसे तमिल में 'आंडवन' कहते हैं, याने सत्ता चलाने वाला। हम जहाँ सत्ता की बात करते हैं, वहाँ हम उसकी जगह लेने की बात करते हैं। फिर द्वेष और मत्सर पैदा होता है। मैं 'आंडवन' बनूँगा, तो दूसरा क्या चुप रहेगा? वह भी चाहेगा कि मैं भी आंडवन बनूँ! फिर दुनिया में आंडवन ही आंडवन बनेंगे। फिर जिनकी सेवा करनी है, उनकी ओर ध्यान ही नहीं जायेगा।

(तिरुवादउर, मदुरा, ५-१-'५७)

करुणा की परिसीमा!

(विनोबा)

सब भेद मनुष्य मिटा सकता है, लेकिन एक भेद मिटाना मनुष्य के लिए मुश्किल है और वह है व्यक्तिगत भेद! दो भाई हैं। चाहे एक ही घर में रहते हों, एक ही पार्टी में मानते हों; परंतु अगर उनके मन में परस्पर-द्वेष-मत्सर होगा, तो वे दोनों एक काम में नहीं लग सकते! मत्सर और द्वेष का मनुष्य पर इतना प्रभाव होता है कि वह मानवता के काम से भी उनको रोकता है। जहाँ इस प्रकार का व्यक्तिगत द्वेष और मत्सर है, वहाँ काम नहीं बनता है। परंतु अनेक प्रकार के भेद करुणा के कार्य में लुप्त हो जाते हैं। लेकिन करुणा का कार्य ऐसा तेजस्वी होना चाहिए कि उसमें व्यक्तिगत मत्सर, द्वेष और भेद मनुष्य छोड़ ही दे! ऐसी वह योजना होनी चाहिए। भूदान की करुणा में इतनी सामर्थ्य नहीं है, पर ग्रामदान की करुणा में इतनी सामर्थ्य है। यह बहुत बड़ी करुणा है, जहाँ सारे गाँव के लोग अपनी मालकियत छोड़ कर गाँव को समर्पण करते हैं। कोई गरीब, भूखा, दुःखी मनुष्य सामने आया है, तो उतनी मालकियत कायम रख कर उसको थोड़ा-सा कोई देता है, तो वह सामान्य करुणा है। परंतु मैं अपनी मालकियत ही मिटा देता हूँ, उसको अपने साथ अपने जैसा बना देता हूँ, यह करुणा की परिसीमा हो जाती है। सुदामा जब भगवान् श्रीकृष्ण को मिलने के लिए गये, तो कृष्ण ने न सिर्फ उनका स्वागत किया, न सिर्फ भोजन दिया, लेकिन जिस आसन पर लक्ष्मी के साथ भगवान् स्वयं बैठे थे, उस आसन पर उसे बिठाया। ऐसे ही दयालु पुरुष होते हैं। वे प्रेम से स्वागत करते हैं, सब करते हैं; परंतु अपने आसन पर ही जहाँ बिठा दिया, वहाँ कारुण्य की सीमा हो गयी। माणिक्य-वाचकर ने इसका वर्णन किया है—: "शिवनाक्कि एनै आळ्वाय।" मुझे शिव बनाता है और मुझ पर प्यार करता है। "मैं शिवम्, तुम अशिवम्, तुम हमारे भक्त, तुम पर हम कृपा करते हैं," ऐसा भगवान् नहीं करते हैं। वे तो तुमको भी शिव बना देते हैं, याने करुणा की सीमा हो जाती है। ऐसी परम करुणा प्रकट होती है, तो वहाँ व्यक्तिगत भेद, मत्सर द्वेष सारे खत्म हो जाते हैं। फिर जाति-भेद, पक्ष-भेद जैसे मामूली भेद तो खत्म होते ही हैं।

कार्यकर्ताओं को अब कमर कसनी चाहिए, उम्मीद रखनी चाहिए। लोगों के पास मांगने के लिए जाने के पहले अपना कुछ देना चाहिए। अपना बहुत ज्यादा देना पड़ेगा, तभी लोगों से मांगने का अधिकार प्राप्त होगा। हमारे संयोग से अगर लोगों के हृदय में भक्ति उत्पन्न करनी है, तो हमारे खुद के हृदय में कितनी भक्ति होनी चाहिये? सूर्यनारायण के किरणों के स्पर्श से हमारे शरीर में ९८° उष्णता रहती है। अगर ९८°उष्णता रखता वही होता, तो हम तो ठंडे ही पड़ जाते। इसलिए जो लोक-सेवक हैं, उसको सूर्यनारायण के समान ज्वलंत अग्नि बनना चाहिए। उनकी संगति से लोगों के शरीर में ९८° उष्णता आ जायगी। करुणा का कार्य करने के लिए अपने हृदय में करुणा के सिवा और कोई चीज ही नहीं होनी चाहिए।

जैसे कावेरी का प्रवाह सतत बहता है, वैसे सतत् कार्य जारी रहना चाहिए। बाबा का काम बनता है, क्योंकि वह अखंड चलता है। लोगों के सामने एक ज्योति, नंदादीप, अखंड जलती ही रहती है, इसलिए जागृति होती है। अभी कोइंबतूर में हमारे जगन्नाथनजी ने हमें कहा कि आप रोज दुबारा यात्रा करते हैं, तो स्वागत आदि में हमारा समय ज्यादा जाता है। अगर आप एक एक गाँव में दो-दो तीन-तीन दिन ठहरें और फिर आगे जायँ, तो खूब काम बढ़ेगा बाबा को एक जगह बिठाने की उनकी यह युक्ति थी, परंतु मैंने कहा कि काम बढ़े ना बढ़े, बाबा को कोई परवाह नहीं है, बाबा की यात्रा खंडित नहीं होगी।

> बाबा खड़ा होगा, तो सोये हुए लोग उठ बैठेंगे। बाबा चलने लगेगा, तो लोग खड़े होंगे। बाबा दौड़ने लगेगा, तो वे चलने लगेंगे। बाबा जब मरेगा तब वे जीयेंगे! यह बाबा समझ गया है कि इस काम में बाबा को अपने शरीर की आहुति देनी होगी! बिना आहुति, बिना बलिदान के यज्ञ बनता ही नहीं। वह आहुति होगी, तब जीवन जागृत हो जायेगा।

(तोरंगकुरुची, त्रिचनापल्ली, १०-१-'५७)

---

www.vinoba.in

चलता मुसाफिर ही पायेगा, मंजिल और मुकाम रे !

[श्री गोविन्दन्‌जी परंधाम-आश्रम के विनोबाजी के साथी हैं। कांचनमुक्ति की उपासना में वे भी प्रतिज्ञाबद्ध थे। चांडिल-संमेलन के बाद विनोबाजी ने जब आश्रमवासियों को गया जाने का आदेश दिया, तो गोविन्दन्‌जी भी गया आये और नवादा के इलाके में करीब दो वर्ष सतत चरैवेति की निष्ठा से भूदान में जुटे रहे। गत छह माह से, कांचीपुरम्-संमेलन के बाद वे केरल में पदयात्रा करते रहे।

पलनी के अपने मुकाम में विनोबाजी ने उनको बुलाया। तार पाते ही वे पैदल निकल पड़े। पर जब पहले ही रोज तीस मील चल चुके, तो साथियों ने रोका और मजबूर किया कि बाबा ने तार किया है, तो शीघ्र पहुँचना चाहिए; इसलिए चलने के बजाय रेल से जाना चाहिए। गोविंदन्‌जी ने मित्रों की सलाह का आदर किया और दूसरे रोज बाबा के पास पहुँच गये।

गोविंदन्‌जी ने 'गीता-प्रवचन' के मलयाली अनुवाद में महत्त्वपूर्ण योग दिया है। मराठी-मलयाली गीता-प्रवचनों के अतिरिक्त हिंदी, गुजराती, तेलगु, उडिया, तमिल अनुवाद भी वे तुलनात्मक दृष्टि से पढ़ते रहते हैं। गोविंदन्‌जी जितने मलयाली भाषा के भजन जानते होंगे, उससे कम मराठी संतों के अभंग और भजन नहीं जानते। 'ज्ञानदेव-चिन्तनिका' का चिंतन तो उन्होंने सतत डेढ-दो वर्षों तक किया है।

पलनी-प्रस्ताव की पार्श्वभूमि में गोविंदन्‌जी का भावी कार्यक्रम तय करके बाबा ने उन्हें विदा किया और कहा कि कोझीकोड (१५० मील) पहुँचना है। रेल से पहुँचो ओर वहाँ से पदयात्रा शुरू कर दो। गोविंदन्‌जी न विनय की कि म तो पैदल ही जाऊँगा। बाबा ने इजाजत दे दी!

इस पदयात्रा में गोविंदन्‌जी को जो अनभव हुआ, वह हम सभी के लिए उद्‌बोधक है। पू० बाबा के नाम लिखे पत्र का एक अंश यहाँ दे रहे हैं। —दा० मूं०]

"परम पूज्य बाबा,

ता० १०–१२ को ढाई बजे कोडैकानल के लिए रवाना हुआ। करीब साढ़ेपाँच मील अच्छी सड़क थी। चार बजे कुंभकरै पहुँचा। वहाँ से ११ मील ऊपर चढ़न है। रास्ता पगडंडी का ही है। मैं अकेला ही आगे बढ़ा, परमेश्वर पर पूरी श्रद्धा रख कर। सूर्यास्त हो गया था। कौवे, तोते, कोकिल आदि के गान से जंगल गूँज रहा था। जंगल के अन्य छोटे-छोटे जंतुओं की भी आवाज़ आने लगी। कभी पीछे मुड़ कर देखता हूँ, तो पेरीयकुलं, तेनी और छोटे-बड़े अन्य गाँवों की बत्तियाँ दिखाई देती थीं। मैंने सोचा, इस समय पाँव फिसल कर गिर पड़ूँ, तो किसको पता चलेगा? या साँप काट कर मर जाऊँ, तो कहीं लोग बाबा को वो दोषी नहीं बनायेंगे? सुना था कि इस जंगल में शेर, हाथी और जंगली सूअर भी हैं। उनका आक्रमण हो जाय, तो मेरा पता तक किसीको नहीं लगेगा। तुरंत मैंने याद किया—"चित्त शुद्ध तरी, शत्रु मित्र होती। व्याघ्र ही न खाती सर्प तया।" (अगर चित्त शुद्ध हो, तो शत्रु भी मित्र बन जाते हैं। न फिर उसे साँप काटते हैं, न शेर खाता है।) यह मंत्र जपते ही मेरे सामने पवनार के स्वर्गीय कोटी बाबाजी की मूर्ति खड़ी हो गयी। तब तक काफी अंधेरा छा गया था। पर चंदामामा अपना आलोक पेड़ों के बीच से थोड़ा-थोड़ा फैला रहा था। जब कभी खुले आकाश का दर्शन होता, तो कार्तिका, मृग और व्याध पूरब दिशा में दिखाई देते। मैं तो काफी थक गया। प्यास खूब लगी। बायीं तरफ एक नाला कल-कल करता हुआ बह रहा था। उसमें से एक लोटा पानी पीया। आराम करने की इच्छा हो रही थी। पर मैंने सोचा—"चलता मुसाफिर ही पायेगा, मंजिल और मुकाम रे!" इस समय 'गीता-प्रवचन' के बारहवाँ अध्याय का वह प्रसंग मेरे ध्यान में आया, जहाँ एक व्यक्ति जंगल-मार्ग को विघ्न-रूप समझता है; दूसरा साधन-रूप! और मैं कदम आगे बढ़ाते ही गया। ढाई मील दूरी पर कॉंक्रीट रोड पर पहुँचा। आधा मील और गया, तो "सेक्रेड हार्ट कॉलेज" का बोर्ड देखा। थका होने के कारण वहाँ आराम के वास्ते गया और एक सज्जन से मिला। वे वहाँ के फादर के पास गये और मेरी माँग उन्होंने फादर से कही। फादर ने इन्कार किया। मैंने उनसे कहा, "If you had a sacred heart on me!" (अगर आपके हृदय में मेरे प्रति पवित्र भावनाएं होतीं!) उन्होंने कहा—"मैं क्या करूँ? यह एक धार्मिक संस्था है। क्रिश्चियन लोग ही यहाँ रह सकते हैं।"

"मैंने कहा:—"O Lord ! O Father ! Forgive them, because they do not know what they do." (हे पिता परमेश्वर, उन्हें माफ कर, क्योंकि वे क्या कर रहे हैं, इसका उन्हें पता नहीं।)पर उनके हृदय का परदा खुल जाय, तब न? ठंढी बढ़ रही थी। अभी तक चलने के कारण ठंढी का खयाल उतना नहीं था। पर ठंढी ने मुझे रोका नहीं। फिर और दो मील चल कर कोडैकानल पहुँचा। उस रात एक होटल में रहा।

"पलनी यहाँ से पचीस मील है। सारा का सारा पहाड़ी रास्ता है। ज्यादातर उतराव ही है। पर बीच-बीच में थोड़ा चढ़ना भी पड़ता है। दूसरी जगह जाने की भी पगडंडियाँ हैं। अतः रास्ता समझना मुश्किल था। पर थोड़ी दूर तक एक साथी मिले। फिर थोड़ी दूर अकेले घूमते-घूमते भटक गया, उतने में पलनी जाने वाले तीन-चार साथी मिले और मैं उनके साथ हो गया। एक जगह दो-तीन लोग लकड़ी काट रहे थे। मुझे अकेला देख कर मेरे पास की थैली लूटने के लिए वे आ ही रहे थे, उतने में मेरे पीछे आने वालों की आवाज़ सुनी, तो वे लोग कुछ और ही बात करने लगे पलनी का वह रास्ता कोडैकानल आने के (पेरीयकुलं से) रास्ते से ज्यादा खतरनाक है। आठ-दस फीट ऊँचे घास से सारी पगडंडी ढँकी हुई थी। मैंने सोचा, अगर रात को मैं यहाँ पहुँचा होता, तो मेरी क्या दशा होती! दिन में चलते हुए ही तो दो-चार बार टक्कर खायी! फिर भी आगे बढ़ता गया और शाम को साढ़े-पाँच बजे पलनी पहुँचा। पलनी से दूसरे दिन सबेरे उडुमलपेट के लिए रवाना हुआ। सड़क ही थी। फिर कोझीकोड़ पहुँचने तक कोई तकलीफ नहीं हुई।

कोझीकोड़ गोविंदन् के प्रणाम"

श्री गोविंदन्‌जी को लिखाये पत्र में बाबा कहते हैं:

"तुम्हारा पत्र मिला। लंबा नहीं हुआ। जैसा चाहिए वैसा ही है। अब अगले पत्र में अपने कार्यक्षेत्र का एक नक्शा भी भेजना, जिससे कल्पना आ सके।

"चित्त शुद्ध तरी शत्रु मित्र होती" वाले मंत्र ने तुम्हें बल दिया, यह अच्छा है। उस मंत्र के अनुसार चित्तशुद्धि की साधना प्रतिक्षण प्रतिदिन करनी होगी, तभी उस मंत्र का अनुभव आयेगा। मुझे आशा है, सतत इसका खयाल रखोगे।

"फादर की कहानी सुन कर दया आयी। धर्म-संस्थाओं ने लोगों को धार्मिक बनाने के बजाय किस तरह संकुचित और अधार्मिक बनाया है! इसकी यह एक मिसाल है!

—विनोबा"

नयी तालीम का पदार्थ-पाठ

हर मनुष्य तथा समाज की कुछ प्राथमिक तथा मुख्य आवश्यकताएँ होती हैं और कुछ गौण। प्राथमिक आवश्यकताओं में भोजन, कपड़ा और मकान मुख्य हैं।

प्रति व्यक्ति प्रति दिन औसतन् अन्न ६ छटाँक, दाल १ छटाँक, दूध-छाछ ८ छटाँक, घी १ तोला, तेल २ तोला, सब्जी-फल ८ छटाँक, मीठा १ छटाँक, नमक १॥ तोला, मसाला १ तोला, जलावन १ सेर चाहिए।

प्रति व्यक्ति कपड़ा वर्ष भर में २० वर्गगज़ आवश्यक है। पाँच व्यक्तियों के परिवार के लिए ऐसा मकान होना चाहिए, जिसमें सामान के लिए १८' × १२' का एक कमरा, रसोई बनाने १२' × १०' का एक कमरा, पठन-पाठन तथा पारिवारिक सांस्कृतिक कार्य के लिए १०' × १०' का एक कमरा, मवेशी अथवा पालतू जानवरों के लिए १२' × १०' का एक कमरा और सोने-बैठने के लिए १२' × १०' का एक कमरा हो। इन प्राथमिक आवश्यकता के साधनों की प्राप्ति में सिक्के का उपयोग कम से कम किया जाय। ध्यान यह रहे कि गाँव का कच्चा माल गाँव में ही पक्का बना कर सामान की आवश्यकता की पूर्ति की व्यवस्था की जा सकती है।

शिक्षा और औषधि की गिनती भी प्राथमिक आवश्यकताओं में होगी। पर समाज ये दोनों साधन पारस्परिक सामूहिक भावना से आसानी से प्राप्त कर सकता है। आज शिक्षा का आधार नौकरी हो गया है। शिक्षा का आधार ज्ञान होना चाहिए, अतः इस तरह की शिक्षा ग्रामस्वावलम्बन याने बिना सरकारी नियंत्रण के, समाज के सहयोग से प्राप्त हो सकती है।

बुनियादी शाला का स्थान गाँव के साथ होना चाहिए। प्रत्येक किसान का घर बुनियादी शाला का मुख्य विभाग होगा। उसके घरों में चलने वाले उद्योग उनके पदार्थ-पाठ होंगे। ग्रामवासियों के परम्परागत सुधरे तथा बिगड़े उद्योगों का तुलनात्मक प्रत्यक्ष उदाहरण विद्यार्थियों के अनुभव बढ़ाने में सहायक होगा। गाँव के साथ सम्बन्धित होने से बुनियादी शाला में छात्रावास की आवश्यकता नहीं होगी। गाँव के किसानों के कार्य से पाठ्यक्रम का विशेष सम्बन्ध होगा। शाला की स्थापना गाँवों के साथ और उद्योग की शिक्षा पालकों के साथ होना ही अधिक कारगर होगा। उस उद्योग में शिक्षक को शरीक होना ही चाहिए।

तिरिल, राँची —भवानीसिंह

www.vinoba.in

समय की चुनौती !

(विनोबा)

सर्वोदय पर अत्यंत प्रेम करने वाले कुछ लोग काँग्रेस में हैं, कुछ प्रजासमाजवादी पक्ष में, कुछ सरकार में, तो कुछ बाहर हैं। इस तरह उनकी चार-पाँच जातियाँ हो गयी हैं। इसके लिए मैं किसीको दोष नहीं दे सकता। सूर्यनारायण का अस्त होने पर सब तारिकाएँ अपने-अपने तेज से चमकती हैं। गांधीजी के अस्त के बाद जिनको जिस तरह सूझा, वैसा उन्होंने किया और कुछ लोगों ने तो सर्वोदय के खयाल से ही किया। मिसाल के तौर पर कृपालानीजी हैं। मैं नहीं मानता हूँ कि उनमें सर्वोदय की भावना मुझसे कम होगी। परंतु उनको जो सूझा, वह पंथ उन्होंने लिया। काकासाहब कालेलकर और हमारा चालीस साल से भी ज्यादा समय का परिचय है। सर्वोदय-विचारों पर पचीसों बार हमारी एक-दूसरे के साथ चर्चा हुई है। दोनों के विचारों में कोई खास फ़र्क़ नहीं है, लेकिन फिर भी उनको लगता है कि काँग्रेस में रहना ही अच्छा है। जैसे ये व्यंकटाचलपति हैं। इसमें कोई शक नहीं है कि वे पूरे-के-पूरे इस काम में हैं। वे सरकार में गये, तो भी इसी खयाल से कि इस काम में उससे कुछ मदद होगी। कुछ लोग मेरे जैसे भी हैं, जो उसमें पड़े ही नहीं।

इतना सब होने पर भी हम सबकी कुल जमात एक है। गांधीजी को गये नौ साल होने आये हैं। सरकार की द्वितीय पंचवर्षीय योजना हो रही है और चुनाव आ रहे हैं। इस समय भी अगर हमारे चित्त की अव्यवस्था रही, तो आगे के भी पाँच साल वैसे ही चले जायेंगे और सर्वोदय की ताक़त नहीं बढ़ेगी। इसलिए अब हमारा दिमाग साफ करने का समय आ गया है।

दूसरे, सर्वोदय के सामने एक चैलेंज (चुनौती) खड़ी हुई है। यहाँ सैकड़ों ग्रामदान मिल रहे हैं। उड़ीसा में भी हजारों ग्रामदान मिले, परंतु वहाँ एक खास परिस्थिति में वह काम हुआ। वहाँ आदिवासी समाज ज्यादा है। उनकी योग्यता यह कहने से कुछ कम होती है, ऐसी बात नहीं। वहाँ दुहरा काम होता है। एक तो आदिवासी की सेवा का, दूसरे सर्वोदय की रचना का। फिर भी यहाँ के ग्रामदान से वहाँ के ग्रामदान कुछ अलग हैं, याने यहाँ तो दरअसल एक चुनौती ही है। ये गाँव केवल आदिवासियों के गाँव नहीं हैं। यहाँ अच्छे समझने वाले लोग हैं। हम अधिक ताक़त लगायेंगे, तो यहाँ और भी ग्रामदान मिल सकते हैं। ग्रामदान की प्राप्ति को हम मर्यादा भी नहीं डालना चाहते। ग्रामदान तो बढ़ने ही चाहिए। रही उनके इंतजाम की बात, तो मान लीजिये कि एक लाख ग्रामदान मिल गये। तो सबका इंतजाम हम ही नहीं करने वाले हैं। कुछ गाँव सरकार, कुछ कम्यूनिटी प्रोजेक्ट और कुछ दूसरी संस्थाएँ ले लेंगी। हमारी तरफ से भी कुछ नमूने पेश करने होंगे। अगर इस वक्त हम इस काम में नहीं लगेंगे, तो वह weighed and found wanting. (सोचा बहुत, लेकिन पाया कम) ऐसा होगा।

कहा गया कि सर्वोदय-मंडल अगर बनाया जाय, तो उसके लिए कोई "पोरुप्पु" (उत्तरदायित्व) चाहिए। ग्रामदान की चुनौती स्वीकारना ही उसका "पोरुप्पु" लेना है। ग्रामदान और भूदान के जरिये एक Agrarian Revolution (कृषिक्रांति) की यह बात है। कृषिक्रांति में तो सबसे मदद मिलेगी। लेकिन काम हमें अपने ढंग से ही करना होगा। इसलिए यह पंचविध योजना है। उसमें जातिभेद-निरसन को भी रख सकते हैं। मैं समझता था कि उसमें वह आ ही जाता है, लेकिन श्री जी० रामचंद्रन् जी कहते हैं कि उसे स्पष्ट करना चाहिए। इस प्रांत में एक खास परिस्थिति है, इसलिए हम वह काम इसमें जोड़ सकते हैं।

सर्व-सेवा-संघ अनेक संस्थाओं का एक सम्मिलित संघ बनाने की बात पहले चलती थी। वह बात अच्छी तरह और पूरी नहीं बनी। कुछ बनी, कुछ नहीं। कुछ यश मिला, कुछ अयश। उससे मैंने लाभ उठाया ! मैंने सोचा कि हमको नैतिक अनुशासन ही करना चाहिए। दूसरी तरह का संगठन करने में हम अपने मूल सिद्धांत को ही छोड़ेंगे। संस्थाएँ अलग-अलग ढंग से बना करती हैं। उन सभी संस्थाओं में इन पाँचों बातों को मानने वाले लोग नहीं है। शायद सर्व-सेवा-संघ वैसा बनेगा। 'शायद' कहता हूँ ! संभव है कि ऐसा वह बनेगा। बाकी मैं कह नहीं सकता कि सभी लोग यह बात मान लेंगे, क्योंकि भिन्न-भिन्न संस्थाओं के कई बड़े लोग काँग्रेस, पी० एस० पी० या सरकार में हैं। हमारा उन संस्थाओं से कोई द्वेष नहीं है। उनका अपना-अपना फंक्शन (कार्य) है, परंतु क्रांति वैसे ही ढंग से, उन्हें रख कर नहीं हो सकती। मैंने सत्याग्रही लोकसेवक नाम दिया। ये दोनों शब्द गांधीजी के हैं। लेकिन कहीं भी ये दोनों इकट्ठे नहीं थे। पर हमने उनको जोड़ दिया है। पर इन भिन्न-भिन्न संस्थाओं में भी कुछ ऐसे लोग होंगे, जो इस बात को मान्य करते हों। जिनकी काम करने की प्रीति है, तो वे इस काम में आ जायँ।

आज संस्थाएँ हैं, वे तरह-तरह के काम करती हैं। परंतु सर्वोदय-मंडल के सामने ध्येय रहेगा—भूदान और ग्रामदान के जरिये, सर्वोदय के ढंग से सामाजिक क्रांति करना। हमें केवल सामाजिक सुधार नहीं चाहिए। हमें क्रांति करनी है। सर्व-सेवा-संघ, गांधीग्राम, कल्लुपट्टी, कस्तूरबाग्राम आदि सब संस्थाओं में से एकाध मनुष्य उस मंडल में होना चाहिए। फिर वे क्रांति का चिंतन करेंगे और इन संस्थाओं से पूछेंगे कि ग्रामदान के गाँव में फलाँ काम करना है, वह आपके क्षेत्र में आता है, तो क्या वह आप करियेगा ? सर्व-सेवा-संघ को कहेंगे कि कितने गाँवों में आप खादी का काम कर सकते हैं ? दूसरे को नयी तालीम का पूछेंगे। इस तरह जिनसे जो मदद मिल सकती है, उन सबको पूछेंगे। ये सारे लोग साधन के तौर पर रहेंगे। कुछ बात वे मानेंगे, कुछ कामों में अपनी असमर्थता बतायेंगे, तो उसकी पूर्ति हमें करनी होगी।

> यह एक Crucial (कसौटी का) समय है। अब तक एक पुराना प्रवाह चला आ रहा है, परंतु उस प्रवाह को हम अभी नहीं तोड़ेंगे, तो और पाँच साल इसमें चले जायँग और हम एक मौका ही खोयेंगे। चुनाव के बाद तो हम कांग्रेसवालों से और दूसरे पक्षवालों से भी सहयोग की मांग करेंगे, परंतु सर्वोदय की क्रांति न कांग्रेस द्वारा होने वाली है, न पी० एस० पी० द्वारा, न और किसी पार्टी द्वारा, क्योंकि उनका सारा चिंतन सत्ता के इर्दगिर्द चलता है। उस चिंतन से मुक्त हुए बिना क्रांति नहीं हो सकती। इसलिए ऐसे मुक्त लोगों का एक मंडल बनता है, तो परिणाम अच्छा होता है।

जिनके मन में यह विचार स्पष्ट है, उन्हें आज की अपनी जिम्मेवारी से मुक्त होना चाहिए। सर्वोदय के विचार में मानने वालों में से जिनकी इस पर निष्ठा है, ऐसे लोगों का प्रतिनिधित्व, उनका सर्वोत्तम हिस्सा सर्वोदय-मंडल में हो, तो फिर उनके शब्दों का एक नैतिक वजन होगा। इस वक्त हिम्मत करके जो सब छोड़ेगा, वह बहुत बल पायेगा। लेकिन उसके लिए conviction(दृढ़ निष्ठा)चाहिए। हमने तो अपने मन में मान लिया है कि हमारे अत्यंत निकटतम साथी भी हमें छोड़ कर चले जा सकते हैं और जैसे धर्मराज एक कुत्ते को लेकर (स्वर्ग की तरफ़) आगे बढ़े थे, वैसे हम भी एक कुत्ते को लेकर आगे बढ़ेंगे ! फिर भी आपसे हम इतना ही कहेंगे कि मन को दृढ़ करके इसमें आइये, मन दृढ़ न हो, तो मत आइये। परंतु जैसा कि शेक्सपीअर ने कहा है : "There is a tide in the affairs of men."

(कार्यकर्ताओं के साथ, मदुरा, ३१-१२-५६)

स्पष्ट विचार करने की वेला

(विनोबा)

...जो लोग अभी रचनात्मक काम कर रहे हैं, उनके विचारों में सफाई नहीं है, इसलिए निर्माण-कार्य में से अहिंसक शक्ति का दर्शन नहीं हुआ। गरीबों को मदद करना ही उस काम का अर्थ कुछ लोगों ने कर लिया। सरकारी और गांधीजी के बताये हुए निर्माण-कार्य में क्या भेद है, यह भी हमारे ध्यान में नहीं आया। इसलिए बहुतों को भास होता है कि दोनों के निर्माण-कार्य साथ-साथ चल सकते हैं, क्योंकि वह भी नयी तालीम, खादी आदि चाहती है। लेकिन यहाँ एक बहुत बड़ी गलती हो रही है और हम भूल रहे हैं कि हमारे निर्माण-कार्य की बुनियाद तो अहिंसक जनशक्ति का निर्माण ही हो सकती है।

भविष्य की सामाजिक रचना के बारे में आज तीन विचार दुनिया में है : (१) राज्य सत्ता सदा रहेगी और रहना चाहिए, उसके बिना नहीं चलेगा। इसे पूंजीवादी और कुछ गांधीवादी भी मानते हैं। पुराने विचारवाले तो इसे मानते ही हैं। (२) राज्य अंत में खत्म होना ही चाहिए, परंतु आज उसकी मजबूती बहुत जरूरी है। यह विचार पूंजीवादियों के मुकाबले के लिए कम्युनिस्ट पेश करते हैं। (३) तीसरा विचार-पक्ष मेरा है। मैं गांधीजी का नाम लेकर बात नहीं करता ! लेकिन मन में सोचता यही हूँ कि गांधीजी के अनुकूल यह विचार है स्टेट् तो अंत में खत्म होनी ही चाहिए। लेकिन उसके खत्म होने की प्रक्रिया भी आज से ही शुरू हो जानी चाहिए। गांधीजी की सिखावन की मूल चीज यही है। लेकिन उनके नाम से कई बातें चलती हैं, इसलिए वह नाम मैं नहीं लेता हूँ।

रचनात्मक काम करने वालों का विश्वास इन तीनों में से किसमें हैं, यह स्पष्ट होना चाहिए। आज ऐसा नहीं है, इसलिए कोई भिन्न-भिन्न पार्टियों

www.vinoba.in

में, तो कोई तटस्थ हैं और स्वतंत्र लोकशक्ति के निर्माण का हमारा धर्म हमने समझा ही नहीं है। इसलिए हमारी ताकत भी नहीं बन रही है। अतः एक ऐसा सर्वोदय-मंडल हो, जो कार्यकर्ताओं को नैतिक हिदायतें दे, अहिंसा और रचनात्मक काम के बारे में उठने वाले सवालों आदि पर सोचें। कल्लुपट्टी-आश्रम के पास एक राइस (चावल) मिल के लिए लायसेंस देने की हिम्मत सरकार को कैसे हुई? लेकिन इसका कारण है, हमारे काम सरकार के साथ मिले-जुले हैं। विचार में सफाई न होने के कारण आपस में भी हमारा असंतोष चलता है और आस-पास की गरीबी की ओर भी हमारा ध्यान नहीं जाता है।

यह मंडल पंचविध कार्यक्रम को मानने वाले लोगों में से बनेगा। रचनात्मक संस्थाएँ उनकी सलाह या तो मानेगी या न मानने के कारण बतायेंगी। ग्रामदानी गाँवों का काम, वेतन की समानता आदि प्रश्नों पर भी यह मंडल विचार करेगा। लेकिन यह सिर्फ सलाह एवं मार्गदर्शन देगा, अनुशासन नहीं चलायेगा और लोग साधारण तौर पर यह सलाह मानेंगे। इसीको हम शासन-मुक्त समाज कहते हैं। हम चाहते हैं कि सरकार भी ऐसी ही बने।

सरकारी मदद का मैं विरोध नहीं करता हूँ, फिर भी सरकार को मदद करने में जितना मैं खुला हूँ, उतना लेने में खुला नहीं हूँ। फिर भी मदद ली और दी जा सकती है, लेकिन हमारा लक्ष्य और हमारा काम क्या है, इसका स्पष्ट दर्शन हमें हो जाना चाहिए।

(मदुरा, कार्यकर्ताओं के साथ, ३०-१२-'५६)

सत्तावन् की प्रार्थना!

(आशादेवी आर्यनायकम्)

सन् '५७ की क्रान्ति का संकल्प लेने के लिए पहली जनवरी, १९५७ को सेवाग्राम-आश्रम की प्रार्थना-भूमि में एक प्रार्थना-सभा हुई। प्रार्थना-मंडली के बीच में पुराने स्थान पर बापूजी का प्रार्थना-आसन रखा गया था। इस प्रार्थना-सभा में हिन्दुस्तानी तालीमी-संघ का परिवार, वर्धा जिले के अखंड पदयात्री, भूदान-सेवक और वर्धा के रचनात्मक कार्यकर्ता और विद्यार्थियों ने भाग लिया।

पहले आधा घंटा सूत्रयज्ञ हुआ। उसके बाद नीचे लिखे क्रम के अनुसार विशेष प्रार्थना हुई। प्रार्थना के बाद संकल्प-ग्रहण का कार्यक्रम हुआ। सबसे पहले हिन्दुस्तानी तालीमी-संघ के दो विद्यार्थी एक वर्ष का संकल्प ग्रहण करके बंगाल और आसाम के लिए रवाना हुए। इसके बाद वर्धा जिले के भूदान-सेवकों की ओर से श्री. वसंतराव बोंबटकर ने नीचे लिखा संकल्प लिया:

> "आज १ जनवरी, '५७ के प्रथम दिन आश्रम से पूज्य बापूजी को श्रद्धांजलि अर्पण करके और आप सब भाई-बहनों का आशीर्वाद लेकर साल भर के लिए हम भूमि क्रांति का संदेश लेकर निकल रहे हैं। भगवान् की एक साल की कैद स्वीकार कर हम घर न लौटते हुए क्रान्ति-यात्रा करेंगे। आज हम इने-गिने हैं, बापूजी के पावन आश्रम से यह गंगोत्री निकली है। हमको विश्वास है कि गंगा के समान बढ़ते-बढ़ते वह अपने ध्येय-सागर को मिलेगी। आप सबका प्रेम, सद्भाव हमारे साथ है और एक शुभ कार्य के लिए निःशंक, निडर, निष्कपट होकर हम उत्साह से मिल रहे हैं। इसी आशा से कि भगवान् ने जो प्रेरणा हमको दी है और जो प्रेरणा हमको घर के बाहर निकाल रही है, वही सबमें काम करेगी। भगवान् हमको उसके कार्य के सही वाहन बनने की शक्ति दे।"

प्रार्थना का क्रम:

(१) जापानी बौद्ध-प्रार्थना, (२) सेवक की प्रार्थना (गांधीजी), (३) स्थितप्रज्ञ के लक्षण ('गीताई'), (४) 'रामचरितमानस' से—(लंकाकांड, दोहा-८०-क), (५) इस्लाम-धर्म की प्रार्थना – ('कुरान' से), (६) ईसाई धर्म की प्रार्थना—(बाईबिल). (७) भजन (मराठी), 'जेथें जातो तेथें...' तुकाराम, (८) नाममाला—ॐ तत्सत्।

प्रार्थना

नम् म्यो हो रें गे क्यों।

सेवक की प्रार्थना

हे नम्रता के सम्राट्!
दीन भंगी की हीन कुटिया के निवासी!
गंगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र के जलों से सिंचित
इस सुन्दर देश में
तुझे सब जगह खोजने में हमें मदद दो
हमें ग्रहणशीलता और खुला दिल दे;
तेरी अपनी नम्रता दे;
हिन्दुस्तान की जनता से
एकरूप होने की शक्ति और उत्कंठा दे।
हे भगवन्!
तू तभी मदद के लिए आता है,
जब मनुष्य शून्य बन कर, तेरी शरण लेता है।
हमें वरदान दे—
कि सेवक और मित्र के नाते,
जिस जनता की हम सेवा करना चाहते हैं,
उससे कभी अलग न पड़ जायँ।
हमें त्याग, भक्ति और नम्रता की मूर्ति बना,
ताकि—इस देश को हम ज्यादा समझें
और ज्यादा चाहें।

—गांधीजी

इसके बाद गीता के दूसरे अध्याय के ५४ से ७२ तक के श्लोक विनोबा कृत मराठी "गीताई" से गाये गये। फिर—

'रामचरितमानस' से लंकाकांड से:

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन भयउ अधीरा।
अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा॥
नाथ न रथ नहि तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥
सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना॥
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे॥
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद बिप्र-गुर-पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा॥
सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रथ ताकें॥
महा अजय संसार रिपु, जीति सकय सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मतिधीर॥८०-क॥

इस्लाम धर्म की प्रार्थना:

अउजु बिल्लाहि मिनश् शैत्वानिर रजीम।
बिस्मिल्लाहिर् रहमानिर् रहीम्।
वल अस्रे इन्नल इन्सानन् लफ़ी खुस्सरिन्
इल्लल लज़ीन्न आमनू-व आमनूस्सालेहाते।
वतवासौ बिल्हक्क वतवासौ बिस्सबरे

शरण लेता हूँ मैं अल्लाह की, पापात्मा शैतान से बचने के लिए। पहले ही पहले नाम लेता हूँ अल्लाह का, जो निहायत रहमवाला मेहरबान है।

ईश्वर, जो हम लोगों का पालनहार है। इस निर्णय की घड़ी की क़सम खाकर कहते हैं कि सारी मनुष्य जाति घाटे में है। मगर उसमें से वे ही लोग लाभ में हैं, जिन्होंने ईश्वर पर विश्वास के साथ सीधी राह पर चलने के लिए कमर कस ली है और वे नेक काम करने को तैयार हो गये हैं। अच्छे काम करने के लिए हमें धीरज और बल की प्रेरणा अपने पालनहार से मिलती रहे, ताकि सफलता हाथ आये।

आमीन्।

(क्रमशः)

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१८ जनवरी सन् १९५७

पंचायतें कैसे होनी चाहीअे ?

(वीनोबा)

मराठी, तमील और तेलगू भाषाओं में 'पंचायत' शब्द का अर्थ है 'झगड़ा !' लेकीन अैसा अर्थ हो जाने का क्या कारण है ?

आज समाज में वीषमता फैली हुअी है। कुछ लोगों के पास जमीन है, तो कुछ के पास नहीं है। कुछ संपत्तीमान है, तो कुछ भीक्षारी। कुछ पढ़े-लीखे हैं, तो दूसरों को शीक्षण नहीं। अीस हालत में गांव में पंचायत आयी, तो अुसका अर्थ यह हुआ की जीन लोगों के हाथ में जमीन, संपत्ती और वीद्या थी, अुन्हींके हाथ में पंचायतों के जरीये और भी सत्ता आ गयी! दीलली वाले समझते हैं की पंचायत से राज्य-सत्ता का वीकेंद्रीकरण होता है। परंतु आज अुसका अर्थ हुआ; गांव-गांव में शोषण-योजना ! अीसलीअे आज पंचायतें लोगों के लीअे सुधारी होने के बदले दुःधारी होती हैं। पंचायत की सही स्थापना तो तब मानी जायेगी, जब गांव में जमीन का बंटवारा होगा अेवं जमीन की मालकीयत मीट जायगी। आज अीसके पहले ही पंचायतें बन जाती हैं, अीसलीअे लाभ के बदले हानी होती है।

दूसरे, आज की पंचायतें बहुमत की राय से बनती और चलती हैं, लेकीन वे सबकी राय से बननी और चलनी चाहीअे। तीसरे, आज पंचायतों को सत्ता दी जाती है, लेकीन अुन्हें सत्ता नहीं, सेवा करने का अधीकार मीलना चाहीअे। मान लीजीये की गांव में सौ घर हैं, तो हर घर की ओर से अेक-अेक मनुष्य लीया जायेगा और अैसे सौ मनुष्यों की समीती बनेगी। ग्राम की सारी सत्ता अुस समीती के हाथ में रहेगी। वह समीती अपने में से दस-पांच व्यक्तीयों को चुनेगी, जो गांव के सेवक होंगे, अधीकारी नहीं। अीस तरह ग्राम-पंचायतें बनेगी, तो वे लाभदायी होंगी। अीससे अुलटा क्रम करने से हानी ही होती है।

लेकीन आज जो ग्राम-पंचायतें बन चुकी हैं और अुनमें जो लोग हैं, अुन लोगों का तो कोअी अपराध नहीं है। अपराध अुस पद्धती का है। अतः आज की पंचायतों में जो हैं, वे अपने गांवों को ग्रामदानी बनाने की कोशीश करें। वे ग्राम-सेवक बन कर, गांव-गांव जाकर लोगों को समझायें की हम सारी जमीन गांव की बना देंगे, मीलजुल कर काम करेंगे, बांट-बांट कर खायेंगे। अीस तरह ग्राम-पंचायत वाले भूदान-कार्यकर्ता बनेंगे, तो वे सच्चे सेवक होंगे और साथ-साथ देश के नेता भी बनेंगे। गांववालों के मन में आदर भी पैदा होगा। वे सोचेंगे की अीन लोगों के पास जमीन थी, परंतु अीन्होंने बाबा से अेक वीचार सीख लीया और अपनी सारी जमीन गांव को दे दी। अब ये हमारे माता-पीता के समान है।

अुशीलम्पट्टी, मदुरा, २२-१२-'५६

सर्वोदय की दृष्टि :

ये निर्णय सचमुच प्रातिनिधिक हैं

प्रो० बंगसाहब का पत्र विनोबाजी के जवाब के साथ 'भूदान-यज्ञ'* में छपा है। श्री त्रिलोकचन्दजी का पत्र† भी देना जरूरी और मुनासिब समझा। प्रो०बंग सर्वोदय-कुटुम्ब के तरुण अध्ययनशील सेवकों में से एक हैं। श्री बंग के पत्र में पुरुषार्थ-प्रधान उत्साह है और श्री त्रिलोकजी के पत्र में उत्साह के साथ-साथ विवेकयुक्त आक्षेप है। पलनी के निर्णयों का स्वागत दोनों करते हैं। उन निर्णयों को कार्य में परिणत करने की आकांक्षा, उत्साह और तत्परता दोनों में है। दोनों के विचार हमारे लिए समादरणीय एवं उपादेय हैं।

त्रिलोकजी का कहना इतना ही है कि पलनी के निर्णय यदि सर्व-सेवा-संघ अपने मत से करने के बदले कार्यकर्ताओं की राय से करता, तो अच्छा होता। उस हालत में वह कार्यकर्ताओं का 'स्वयं-निर्णय', उनकी अपनी मर्ज़ी का फैसला होता। आज उसमें कार्यकर्ताओं की मनशा तो प्रकट हुई है, लेकिन निर्णय लोकतांत्रिक विधि से नहीं हुआ है। इसलिए कार्यकर्ताओं के लिए सिर्फ़ उसका पालन करना ही रह जाता है।

सुनने में एतराज़ बिलकुल ला-जवाब मालूम होता है। लेकिन हक़ीक़त ऐसी नहीं है। लोकतंत्र की आत्मा प्रातिनिधिकत्व है। प्रातिनिधिकता की औपचारिक विधि या बाहरी रस्म का नाम लोकतंत्र है। प्रातिनिधिकत्व की वास्तविकता का नाम लोकसत्ता है। आज चुनाव होते हैं। चुनावों में जिनको वोट मिलते हैं, वे प्रतिनिधि हैं; लोकतंत्र के अनुसार विधिवत् चुने गये बाज़ाप्ता प्रतिनिधि। गांधी और विनोबा को किसीने नहीं चुना। लेकिन वे दरहक़ीक़त जनता के नुमाइंदे, वास्तविक लोकप्रतिनिधि हैं। जनता की आकांक्षाएँ, आशाएँ और सामर्थ्य उनकी विभूति में प्रतिबिंबित होती है। इसलिए उनका व्यक्तित्व ही प्रातिनिधिक है। गांधी ने अहिंसात्मक असहयोग, सविनय कानून-भंग आदि के उपक्रम किये और उन उपक्रमों का उपसंहार भी किया। लोकप्रतिनिधित्व का तंत्र उसमें नहीं था। लेकिन लोकप्रतिनिधित्व का सारभूत तत्त्व था। इसीलिए गांधी के आंदोलन लोकव्यापी आंदोलन हुए।

कार्यकर्ताओं के जितने संमेलनों में उपस्थित होने का मौका हमें मिला, उनमें एक बात हमने बराबर देखी कि कार्यकर्ता त्याग और बलिदान के कार्यक्रमों के लिए उत्कंठित रहते थे। उन्हें ऐसे कार्यक्रमों की उत्सुकता होती थी। उनको शिकायत यह होती थी कि पुराने कार्यकर्ता और नेता क्षीण-प्राण और मंदगति हो गये हैं। वित्तमुक्ति और तंत्रमुक्ति की बात उन्हें भाती थी। जब कभी ऐसी कोई बात कही जाती थी, तो उनका जोश उमड़ पड़ता था। उनका उत्साह तथा उत्सुकता देख हमारा दिल भी फड़कने लगता था। लेकिन उनके उत्साह पर कुछ ठंढे पानी का छिड़काव हमारी तरफ़ से ही होता था। कार्यकर्ताओं की उमंगें और आकांक्षाएँ विनोबा के विश्वात्मक चित्त में प्रतिध्वनित हो उठीं। पलनी में जो निर्णय हुए, वे विनोबा की अंतः प्रेरणा के स्फुल्लिंग हैं, सर्व-सेवा-संघ ने सिर्फ़ उनको श्रद्धापूर्वक झेलने का काम किया। भूदान-यज्ञ के अध्वर्यु विनोबा हैं, यजमान भारतीय लोकात्मा है। सर्व-सेवा-संघ तो भूदान-यज्ञ की प्रक्रिया में सहायता पहुँचाने में अपने अस्तित्व को सार्थक मानता है। इसलिए उसने यज्ञ-पुरुष के संकल्पों को शिरोधार्य मान कर उनका अनुकीर्तन किया। कार्यकर्ताओं ने अपने अनेक संमेलनों में, विधिवत् प्रस्ताव करके नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संकेतों के रूप में अपनी जो आकांक्षाएँ प्रकट कीं, उन्हींको विनोबा ने संकल्पों का रूप दिया। विनोबा कार्यकर्ताओं के 'मुख' के नाते और लोकात्मा के प्रतिनिधि के नाते उन अकांक्षाओं को शब्दान्वित कर रहे थे। इसीलिए देश भर के अधिकांश तरुण कार्यकर्ताओं ने और पुरुषार्थवान् व्यक्तियों ने उन निर्णयों को क्रान्तिकारी बतला कर उनको अभिनंदनीय माना।

कुछ ज्येष्ठ कार्यकर्ताओं का प्रामाणिक मतभेद है। लेकिन उनमें से भी ज्यादातर ऐसे हैं, जो प्रत्यक्ष जन-आंदोलन के क्रियात्मक अंश के विषय में अपनी बुद्धि के निर्णय से आन्दोलन के नेता की निरुपाधिक अंतःप्रेरणा को अधिक प्रमाणभूत मानते हैं। '४२ में गांधीजी के कई समर्थ साथी उनसे सहमत नहीं थे। फिर भी उन्होंने गांधी के आत्मप्रत्यय को अपनी बुद्धि के

---

* देखिये 'भूदान-यज्ञ,' ता० २८-१२-'५६। † देखिये इसी अंक के पृष्ठ १० पर।

www.vinoba.in

संकेतों से अधिक प्रमाणभूत और श्रेयस्कर माना। कुछ ऐसे क्षीण-सत्त्व कार्यकर्ता हैं—जिनमें से एक हम भी हैं—जो अपनी कमज़ोरियों के कारण अपने आपको इन निर्णयों की तामिली करने में असमर्थ पाते हैं। लेकिन विनोबा कार्यकर्ताओं की कमज़ोरियों के प्रतिनिधि नहीं हैं। वे तो जनता की और लोगों की उदात्त आकांक्षाओं का और आत्मप्रत्यय का वास्तविक प्रतिनिधित्व करते हैं।

इसलिए केवल लोकशाही के औपचारिक तंत्र का अनुसरण नहीं किया गया, रस्मी तौर पर सबसे राय नहीं पूछी गयी, यह आपत्ति वास्तविक नहीं है; केवल तांत्रिक है। नेता केवल अपने 'साथियों' के मत का प्रतिनिधि नहीं होता, वह उनकी उन्नत भावनाओं और प्रगतिशील विचारों को अपने व्यक्तित्व से साकार करता है। यही कारण है कि अन्य कार्यकर्ताओं की तरह त्रिलोक भाई ने भी पलनी के संकल्पों का उत्साह और प्रेम से स्वागत किया है।

रानीपतरा, सर्वोदय-आश्रम —दादा धर्माधिकारी
ता. २३-१२-५६

काँग्रेस के चुनाव-घोषणा-पत्र की मंजूरशुदा तरमीम

काँग्रेस के इंदौर-अधिवेशन के समय काँग्रेस के चुनाव-घोषणा-पत्र का मसविदा प्रकाशित हुआ और एक तरमीम के साथ वह खुले अधिवेशन में स्वीकार हो गया। कार्य-समिति द्वारा अधिकृत श्री नंदाजी की इस तरमीम में कहा गया है :

> "गाँवों में रहने वाले भूमिहीन मजदूरों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार करने के लिए ठोस क़दम उठाये जायँ, काम के अधिक अवसर उन्हें दिये जायँ, न्यूनतम मजदूरी तय की जाय, उनके बसाने की योजना बनायी जाय एवं मकान बनाने के लिए उन्हें ज़मीनें दी जायँ।"

स्पष्ट है कि औद्योगिक क्षेत्रों के मजदूरों की हालत सुधारने के जो प्रयत्न होते हैं, उनमें अब खेतिहर मजदूर भी शामिल होंगे। खेतिहर मज़दूरों की जो चिंता इस तरमीम में प्रकट की गयी है, वह उचित ही है और उसके लिए प्रस्तावक धन्यवाद के पात्र हैं। लेकिन एक बुनियादी बात इसमें भुला दी गयी है कि खेतिहर मज़दूरों को ज़मीन दिलाने का कोई आश्वासन या ज़िक्र तक इसमें नहीं किया गया है! इसका अर्थ होता है, बेज़मीन खेतिहर मजदूर बेजमीन ही बने रहें! बेज़मीन किसानों में खेती की भूख कितनी तीव्रता से बढ़ रही है, देश की आर्थिक रचना पर इस कारण किस प्रकार अनुचित प्रभाव पड़ रहा है, अशांति का वातावरण किस तरह बन रहा है, यह सारी वस्तुस्थिति यहाँ भुला दी जा रही है, साथ ही इन पाँच सालों में भूदान-यज्ञ के कारण जो क्रांतिकारी वातावरण बन पाया है, उससे लाभ उठाने का अवसर भी चूका जा रहा है। जमीन की भूख अधिक मज़दूरी से पूरी नहीं हो सकती, यह जाहिर है! इसी तरह खेतिहर मजदूर सतत मालिकों के खेत में मजदूरी ही करते रहें, यह भी संभव नहीं। ऐसी हालत में एक बुनियादी बात की ओर इस तरह दुर्लक्ष्य करना काँग्रेस-जैसी संस्था के लिए कम शोचनीय नहीं है।

कहा जा सकता है कि भूमिहीनों को जमीन देने का आश्वासन निजी मालकियत अक्षुण्ण रखने के संवैधानिक अधिकारों के विरुद्ध जाता है। पर "जोते उसकी जमीन" की बात आज कई सरकारों ने स्वीकार की है, वैसे कानून भी बनाये हैं, भले ही वे कानून अपूर्ण और दोषपूर्ण हों। यदि ऐसे क़दम उठाना असंवैधानिक नहीं माना जा सकता और ज़मींदारियों का विसर्जन भी अगर असंवैधानिक नहीं होता, तो बेजमीनों को जमीनें दिलवाना भी असंवैधानिक हो नहीं सकता। भूदान के कारण जमीन के निजी स्वामित्व के विसर्जन की जो हवा बनती जा रही है, उससे लाभ उठाने की भी मन्शा यहाँ नजर नहीं आती है। फिर, बेजमीन किसानों को जरूरत के लायक जमीनें देने से ही निजी स्वामित्व का 'संपूर्ण विसर्जन' कहाँ हो जाता है और संविधान भी उसमें कहाँ बाधक बनता है?

बेजमीन मजदूर आज बेजबान और असहाय हैं। इसलिए उनकी हालत सुधारने की भावना अवश्य सराहनीय है, लेकिन उसकी सही राह यह नहीं है। उन्हें जमीनें दिलवाना ही सही राह है। भूदान-यज्ञ यही कर रहा है। परंतु इससे सरकार का कर्तव्य कम नहीं होता, और अब तक की काँग्रेस की जो परंपरा है, उस कारण उस पर तो यह जिम्मेवारी अधिक ही आ जाती है।

काशी, ता० १०-१-५७ —लक्ष्मीनारायण भारतीय

विश्वशांति कैसे आ सकती है?

(जो. कॉ. कुमारप्पा)

हमारी दूसरी पंचवार्षिक योजना से दुनिया में शान्ति कायम नहीं होगी। हमारा देश कृषिप्रधान देश है। यदि हमें शान्ति से रहना है, तो हमें कृषि का ही अपनी अर्थव्यवस्था की बुनियाद बनाना चाहिए। इसलिए नहरें, तालाब और नदियाँ, ये हमारे लिए महत्त्व की होनी चाहिए, न कि सड़कें, रेलें और हवाई-मार्ग। हमारी सारी योजना किसान के इर्दगिर्द खड़ी की जानी चाहिए, न कि उद्योगपतियों के। देश के गरीबों की जरूरतें पूरी करना, यह हमारा ध्येय होना चाहिए, न कि विदेशी विनियम प्राप्त करना या विदेशों से तिजारत। नदियों में आने वाली बाढ़ पर अंकुश प्राप्त कर हमें उससे होने वाले नुकसानों से बचना चाहिए। हमारे सारे कच्चे माल का उपयोगी चीजों में रूपान्तर करने का काम हमें खुद करना चाहिए। इन सबके लिए जो मनुष्य-बल प्राप्त है, उसका ज्यादा-से-ज्यादा उपयोग हमें कर लेना है, पूंजी की हमें कम-से-कम जरूरत पड़नी चाहिए। क्या ये दोनों चीजें हमारे वश की नहीं हैं? या जो दौलत हमारे वश की नहीं है, उसे ही प्राप्त करने पर हम तुले हुए हैं? जिस किस्म की दौलत हम प्राप्त करना चाहते हैं, उसीमें हमारा दिल रहेगा और जिसमें हमारा दिल रहेगा, वहीं हमारी सारी शक्ति केन्द्रित होगी। इससे 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत चरितार्थ होगी। आज सारी दुनिया का झुकाव इसी ओर दीखता है। हमें समय रहते चेत जाना चाहिए और विचारपूर्वक अपनी योजनाएँ बनानी चाहिए।

इसलिए हमें हवाई किले बनाना छोड़ कर गांधीजी के बताये हुए व्यवहार्य मार्ग पर चलना चाहिए और आंतर्राष्ट्रीय आक्रमणों के साथ आर्थिक स्तर पर फौरन अहिंसक असहयोग भी पुकार देना चाहिए। हमें न तो उनकी चीजें खरीदनी चाहिए और न अपनी चीजें उन्हें बेचनी चाहिए। उनके जहाजों आदि को हमारे बंदरगाहों में कोई पनाह नहीं मिलनी चाहिए। इस कार्यक्रम में हम सभी लोग शामिल होकर अपना-अपना पार्ट अदा कर सकते हैं। बदक़िस्मती से हमें ऐसा सिखाया गया है कि जितनी भौतिक चीजें हमारे पास अधिक हों, उतना ही हमारा जीवन सुखी और समृद्ध है; फिर वे चीजें इकट्ठी करने से हमारी आत्मा का हनन भले ही हुआ हो। यदि हमें सचमुच में शांति चाहिए, तो हमें अपने जीवन में सादगी लानी चाहिए और यह सादगी अनुशासन और संयम पर अधिष्ठित होनी चाहिए। इस समय लूटखसोट द्वारा आत्मतुष्टि करने पर हम तुले हुए हैं और इनसे सर्वनाश अवश्यंभावी है। यदि हम अपने आर्थिक जीवन में आवश्यक हेरफेर करने के लिए तैयार नहीं हैं, तो स्वेज-नहर पर हुकूमत प्राप्त करने से कोई फायदा नहीं है। केवल समझौतों की बातचीत से शान्ति कायम नहीं की जा सकती। उनसे केवल शब्दच्छल द्वारा एक-दूसरे को धोखा दिया जा सकता है और अंत में हम जिसे अत्यन्त पवित्र समझते हैं, उसका विनाश होकर ही रहेगा।

हमारा राष्ट्र अभी नया ही निर्माण हुआ है, इसलिए यह जरूरी है कि उसे अभी से ही आवश्यक ढंग से ढाल लिया जाय और सही रास्ते पर चलना उसे सिखाया जाय। इसलिए गांधीजी ने सुझाया था कि राष्ट्र-निर्माण के कार्य में पहला कदम बुनियादी शिक्षा दाखिल करना होना चाहिए। पंचशील जहाँ नाकामयाब रहे, वहाँ उचित ढंग से दाखिल की हुई बुनियादी शिक्षा कामयाब होगी।

हमारे देश की भौतिक उन्नति पर हमें नहीं तुले रहना चाहिए। चारित्र्य-निर्माण यह हमारा ध्येय होना चाहिए। अन्य सब बातें उसके साथ आप ही आप आ जावेंगी। यदि हमें कोई ठोस फायदा हासिल करना है, तो केवल तितलियों के पीछे दौड़ते रहने से कुछ भी हाथ नहीं आने वाला है।

("ग्राम-उद्योग-पत्रिका" से)

आचार्य तुलसीजी की अपील

श्री आचार्य तुलसीजी ने एक अपील प्रकाशित की है, जिसमें आगामी चुनाव में, खड़े होने वाले सभी पक्षों के उम्मीदवारों, मतदाताओं, समर्थकों, चुनाव-अधिकारियों और सफल उम्मीदवारों के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण नियम दिये हैं, जिनके द्वारा उन्होंने उनसे अपने सारे कार्यकलापों में अनीति, भय, प्रलोभन, गंदा प्रचार, व्यवसायी वृत्ति, अधर्म, असत्य, पक्षपात, अधिकार आदि का उपयोग न करने और नैतिकता का संपूर्ण पालन करने के लिए विनयपूर्वक कहा है। इसका आश्वासन प्रायः सभी राजनैतिक पार्टियों के नेताओं ने एक गोष्ठी द्वारा दिया।

---

www.vinoba.in

हमारी गृहनीति बनाम विदेशनीति

(रामाधार भाई)

भारतवर्ष की आन्तर्राष्ट्रीय नीति के बारे में काफी सुनने को मिलता है और अक्सर यह भी कहा जाता है कि वह सारी दुनिया में एक नये युग का सूत्रपात करने वाली साबित होगी। अगर यह सच हो, तो हर भारतवासी के लिए यह गौरव की बात होगी और हमें इस बात का विचार करके अति आनन्द होगा कि भारत के एक प्रमुख नेता ने संसार में शान्ति का विस्तार किया और आतंकग्रस्त एक अत्यन्त संकटपूर्ण अवसर पर दुनिया का मार्गदर्शन किया। लेकिन अगर हमारी अपनी नीति नैतिक दृष्टि से वह महत्त्व नहीं रखती, जो महत्त्व उसका ऊपर-ऊपर से दिखाई देता है, तो झूठी बड़ाई का दावा करना भी हमें शोभा नहीं देगा।

किसी भी क्षेत्र अथवा स्तर में विशुद्ध नैतिक दृष्टिकोण वही है, जिसमें समग्रता अथवा अखंडता का सम्पूर्ण समावेश हो। आज विचार के क्षेत्र में विज्ञान की सहायता से ब्रह्माण्ड को एक इकाई के रूप में माना जाने लगा है और इसीलिए मानवता को विचार की सतह पर आज एक इकाई के रूप में ही देखा जाता है, यद्यपि व्यवहार में उसके अनेक खण्ड आज भी हैं। दुर्भाग्य से राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाएं, जातिगत विशेषताएँ एवं मान्यताएँ और विभिन्न वर्गों का अस्तित्व आदि भेद व्यवहार में मनुष्यों के अन्दर अनेक प्रकार की विषमताएँ कायम किये हुए हैं और विचार के क्षेत्र में जो अखण्डता दिखाई देती है, उसे ये भेद पग-पग पर व्यर्थ कर रहे हैं। विचार और आचार की यह विषमता अथवा दोनों का अन्तर्विरोध आज सारे मानव-समाज को आक्रान्त किये हुए है और इसलिए मानवता इतनी त्रस्त हो रही है।

इस परिस्थिति में वही नैतिक दृष्टिकोण मनुष्य को सही मार्ग दिखा सकेगा, जो आचार और विचार का पूर्ण समन्वय लेकर चलता हो। इस समन्वय के बिना कोई भी नीति खण्डित तथा संकीर्ण मनोवृत्ति की द्योतक होगी, अतः वह किसी भी संकटपूर्ण परिस्थिति का समाधान नहीं उपस्थित कर सकेगी। इसके अलावा यह भी देखने की बात है कि अगर हम किसी एक नैतिक सिद्धान्त को एक क्षेत्र में अमल में लाते हैं, तो उसे हर क्षेत्र में लागू करना होगा। यदि हम किसी विशिष्ट सिद्धान्त को आन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपनाते हैं, तो उसी तत्परता से उसे हमें घरेलू अर्थात् राष्ट्रीय तथा सामाजिक क्षेत्र में भी लागू करना होगा। आन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम एक नीति बरतें और अपने घर में दूसरी, तो हम एक भ्रष्ट-नीति के समर्थक ही बनेंगे और उस स्थिति में किसीके भी मार्ग-दर्शन की योग्यता का दावा करना हमारे लिए अशोभनीय होगा।

इस प्रसंग में अगर हम भारत-सरकार की आन्तर्राष्ट्रीय नीति का विश्लेषण करें, तो हमें स्वीकार करना होगा कि उसका नैतिक आधार विचार में सही होते हुए भी राष्ट्रीय स्तर पर आचार में भ्रष्ट हो गया है। आचार-भ्रष्ट विचार एक खण्डित और संकीर्ण प्रक्रिया मात्र है, जिससे समग्रता की आशा करना व्यर्थ है। आज हम आन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शान्ति और अहिंसा के सबसे बड़े समर्थक और पोषक हैं; परन्तु घरेलू प्रश्नों को हम पुलिस और फौज से ही हल करना जानते हैं। ऐसा भी नहीं है कि हम पुलिस और फौज का इस्तेमाल नितान्त मजबूरी में करते हों। दर-असल उन साधनों के अलावा और किसी साधन का उपयोग हमें सूझता ही नहीं और न ही इस दिशा में विचार करने के कोई लक्षण दिखाई देते हैं। गांधीजी जिस तत्परता के साथ अंग्रेजी शासन से लोहा लेते रहे, उसी तत्परता से हमारे देश के भीतरी अन्यायों से भी लड़ते रहे। उनका देश की आज़ादी के लिए उठाया गया युद्ध, एक प्रकार से सारे अन्यायों के साथ विद्रोह करने की प्रक्रिया थी और इसीलिए उसका स्वरूप बहुमुखी बन गया था। उन्होंने अनेक बार कहा था कि जब तक सवर्ण भारतीय हरिजन भारतीयों के साथ अछूतपन का व्यवहार करते हैं, तब तक वे अंग्रेज को अन्यायी कहने के हक़दार नहीं बनते। यह एक समग्र दृष्टिकोण का ही परिणाम था। उसी गांधी का नाम लेकर आज हम दोहरी नीति को अपनाये हुए हैं और आशा करते हैं कि इस खोखले आधार को एक चिरन्तन नैतिक नीति के रूप में संसार स्वीकार करेगा। यह हमारा दंभ नहीं तो और क्या है?

आन्तराष्ट्रीय क्षेत्र मे भी क्या हम तटस्थ रूप से एक ही नीति का उपयोग कर रहे है? दुनिया का हर विचारशील मनुष्य यह जानता है कि रूस ने हंगेरी में जो कुछ किया है, उसका स्वरूप और उसके करने का ढंग चाहे कैसा ही हो, परन्तु अन्ततः वह नग्न साम्राज्यवाद का ही रूपान्तर है; बल्कि यह कहना चाहिए कि रूसी साम्राज्यवाद और भी अधिक खतरनाक तथा निरंकुश किस्म का साम्राज्यवाद है। अतः अगर हम सचमुच ही सारे संसार में अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाना चाहते हैं और न्यायनिष्ठ शक्तियों को पोषण देना चाहते हैं, तो हमें जहाँ भी अन्याय दिखाई दे, वहाँ ही निस्संशय होकर उसके विरुद्ध अपनी आवाज़ उठानी चाहिए, अन्याय के प्रतिकार का इलाज ढूँढ़ना चाहिए। परन्तु हम मिश्र के मामले में जिस भाषा में बोले, वह भाषा हमने हंगरी के प्रश्न पर नहीं इस्तेमाल की। इतना ही नहीं, हंगेरी के मामले में हमारे समस्त आचरण में एक विचित्र प्रकार की उलझन, झिझक और अस्पष्टता रही है।

विश्वशान्ति अथवा किसी भी प्रकार की शान्ति का प्रश्न एक व्यापक प्रश्न है। उसे टुकड़ों में नहीं बाँटा जा सकता। हम अपनी समझ की सीमा या मर्यादा के कारण उसे टुकड़े कर करके समझें, यह बात अलहदा है। पर जब उसका हल प्राप्त करने की कोशिश की जायगी, तब उसे उसकी समग्रता के साथ ही देखना और समझना होगा। अशान्ति की जड़ें मनुष्य के बहुत भीतर पैठी हुई हैं। वह समाज में प्रचलित अनेक प्रकार की विषमताओं के कारण पैदा हुई हैं। अगर हम मानव-समाज के विभिन्न खण्डों में उन विषमताओं को कायम रहने दें और सारे संसार में शान्ति स्थापित करने के मन्त्र का जाप करते रहें, तो परिणाम की कल्पना करना बहुत कठिन काम नहीं है। अगर सचमुच स्थायी शान्ति की खोज करनी है, तो विचार और आचार का भेद और उनकी विषमता हर स्तर और हर क्षेत्र में मिटा कर चलने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील होना होगा। एक ओर अगर इस देश की जनता दरिद्र और भूखी है, तो जब तक समृद्धि के दर्शन नहीं होते, तब तक हमें आपस में दरिद्रता और भुखमरी को ही बाँटना होगा। हमारे प्रधान मन्त्री एक ओर आन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों में शान्ति का नारा बुलन्द करें और दूसरी ओर संसद में खड़े होकर बड़ी शान से कहें कि वह दरिद्रता का वितरण करने में यकीन नहीं करते, तो शान्ति का गला तो निर्मम हाथों से वहीं घुट गया। अगर इस देश में दरिद्रता का बोलबाला है, तो दरिद्रता ही बँटेगी; और क्या बँट सकता है? क्योंकि सामाजिक न्याय की माँग यही है। जब समृद्धि आयेगी, तब समृद्धि बाँट लेंगे। इस दृष्टि से शान्ति का प्रश्न अन्तत इन्सान को नये सिरे से गढ़ने का प्रश्न है; क्योंकि पहले उसके अन्तःकरण से विग्रह की जड़ें निर्मूल करनी होंगी; तभी तो स्थायी शान्ति का शिलान्यास वहाँ हो सकता है। यह बड़ा कठिन मार्ग है। इसे उस्तरे की धार पर चलना मानना चाहिए। मंत्रों और नारों का उच्चारण तो सभी कर सकते हैं, पर उनसे सचाई कभी किसीके हाथ नहीं लगी।

हमारे देश में आज इन्सानों को इन्सान बनाने का कोई कार्यक्रम नहीं है, यद्यपि योजनाएँ यहाँ अनगिनत हैं। पंचवर्षीय योजनाएँ हैं, कम्यूनिटी प्रोजेक्ट्स हैं, भारत-सेवक-समाज और भारत-साधु-समाज हैं। अब सुना है, कोई भारत-अखाड़ा-समाज भी स्थापित हुआ है। आशा है वहाँ हमारे प्रमुख-प्रमुख नेताओं की कुश्तियों का आयोजन नहीं होगा! परन्तु इसमें इन्सान को नये सिरे से गढ़ने की कोई योजना नहीं है। उसके अभाव में विश्वशान्ति तो क्या, किसी भी तरह की शान्ति सात समुन्दर पार किसी गहरी गुफा में ही सोती रहेगी। घरेलू मामलों में कितनी ही बातों का उल्लेख किया जा सकता है, जहाँ हम बिना सोचें-समझें हिंसा और पशुता का आश्रय लेते हैं। हिंसा का आश्रय लेने के लिए बाध्य होना पड़ता हो और साथ ही उससे छुटकारा पाने का प्रयत्न भी किया जाता हो, तो भी यह परिस्थिति इतनी बीभत्स तथा हास्यास्पद न दिखाई दे। लेकिन सरकार द्वारा अपनाये हुए सारे साधन हिंसा और अन्याय पर आश्रित हैं, जिनके कारण वर्गीकृत समाज का पोषण हो रहा है, यद्यपि ऊपर-ऊपर से समाजवादी व्यवस्था खड़ी करने का दम भरा जाता है। इस मिथ्याचार का सिलसिला ऊपर से आरम्भ होता है और अनेक प्रकार के रूपान्तरों को प्राप्त होकर नीचे तक छनता चला आता है। यही वजह है कि चारों ओर अनेक प्रकार के भ्रष्टाचार का बोलबाला है। यह भ्रष्टाचार भी अनेक रूप ग्रहण करता है। फिर उसके विभिन्न स्वरूपों को रोकने के लिए कानून बनते हैं; उन कानूनों को फिर उन्हीं लोगों द्वारा लागू करवाया जाता है। ज्यों-ज्यों कानूनों की संख्या में वृद्धि होती है, त्यों त्यों भ्रष्टाचार और भी अधिक व्यापक होता है। इससे भिन्न परिणाम हो भी कैसे सकता है? क्या कानूनों से इन्सान कभी बनाया जा सकता है? कौन नहीं जानता कि राजनीति में पड़े हुए व्यक्ति सत्ता प्राप्त करने की होड़ में निकृष्ट से निकृष्ट आचरण करने को प्रस्तुत रहते हैं? इस मनोवृत्ति से ये लोग भ्रष्टाचार से देश की कैसे रक्षा कर सकते हैं? यह पार्टी तो इन्सान को इन्सानियत से नीचे घसीटने की ही है।

---

www.vinoba.in

तमिलनाड़ की क्रांतियात्रा से–

(निर्मला देशपांडे)

भारत की अति प्राचीन मदुरा नगरी की जनता प्राचीन सभ्यता के नूतनतम आविष्कार का संदेश सुनने के लिए बहुत उत्सुक थी। ३० दिसंबर की सुबह जब विनोबाजी ने मदुरा नगरी में प्रवेश किया, तो चार मील के रास्ते पर हजारों स्त्री-पुरुष-बच्चे दर्शन के लिए खड़े थे। मन्दिर के हाथियों ने प्रथम प्रणाम कर स्वागत किया। बहनें रामधुन तथा 'वैष्णव-जन ये' गाती हुई साथ चल रही थीं। आरती तथा सूत्रमाला का स्वीकार करने के लिए विनोबाजी को बीच-बीच में रुकना पड़ता था। कुछ दिन पहले उन्होंने तय किया था कि हर रोज ठीक समय पर सवा आठ बजे पड़ाव पर पहुँचना चाहिए। समय हो रहा था और निवास-स्थान तो दूर था, इसलिए विनोबाजी ने दौड़ना शुरू किया। सारे बड़े-बड़े 'वजनदार' लोग पिछड़ गये! छोटे बन्दरों-सहित विनोबाजी ठीक सवा आठ बजे निवास पर पहुँच गये।

मदुरा की रचनात्मक कार्यकर्ताओं की बैठक में एक सर्वोदय-मंडल बना, जिसमें गुरुस्वामी नादर, जगन्नाथन्‌जी, श्री रामचन्द्रन् और जी० रामचन्द्रन्, रामस्वामी, अमृताबहन, सुब्रह्मण्यम् और आर्यनायकम्‌जी हैं। रचनात्मक संस्थाओं को सलाह देना, विचार-प्रचार करना आदि यह करेगा। इन लोगों सहित और पचास-साठ जनों ने सत्याग्रही लोक-सेवक के प्रतिज्ञा-पत्र पर दस्तखत किये।

मदुरा जिले के काँग्रेस-कार्यकर्ता विनोबाजी से मिले तो विनोबाजी ने उनके सामने ५०० ग्रामदान की माँग पेश की और कहा कि इसे आप अपना प्रथम कार्यक्रम समझो। विनोबाजी ने यह भी कहा कि काँग्रेस की तरफ से भूदान के काम के लिए हर फिरके में एक कार्यकर्ता मिलना चाहिए। बाहर से आये हुए एक कार्यकर्ता ने पूछा—"सत्याग्रही लोकसेवक राजनैतिक पक्षों का सदस्य बना रहा, तो क्या हर्ज है?" विनोबाजी ने जवाब दिया :

> "हम मानते हैं कि जो शख्स किसी भी पक्ष का सदस्य रहेगा, वह अपनी नैतिक शक्ति को निःसंशय कम करेगा। शुद्ध धर्मकार्य करने वाले को राजसत्ता से अलग ही रहना चाहिए। जहाँ आपने कहा कि मैं फलाँ पार्टी का हूँ, वहाँ आप दूसरी पार्टियों के नहीं रहे। जहाँ कहा कि 'मैं हिंदू हूँ', वहाँ आप मुसलमान नहीं रहे। हम तो सब पर समान प्रेम करना चाहते हैं। आप कहते हैं कि हम किसी पार्टी में रहते हैं, तो उस पार्टीवालों के साथ संपर्क रहता है। लेकिन संपर्क केवल शरीर से ही नहीं होता है, मानसिक संपर्क भी होता है।

"टॉलस्टॉय ने ६० साल पहले एक किताब लिखी थी, जिसमें उन्होंने लिखा था कि जमीन की मालकियत मिटनी चाहिए। उसी वक्त मेरा जन्म हुआ, मैं मानता हूँ कि शायद उन्होंने वह लिख कर अपनी वासना मुझमें भर दी! हम जनता को लोकनीति का विचार देना चाहते हैं। आप जहाज में बैठ कर कहीं जा रहे हैं, किनारे पर लाइट हाउस (दीप-गृह) है, वह आपको मदद देता है। अगर आप चाहें कि वह लाइट हाउस भी किनारा छोड़ कर आपके साथ जहाज में चढ़े, तो वह कैसे चलेगा? उसी तरह लाइट हाउस के तौर पर कुछ लोग राजनीति से अलग रहते हैं, तो देश के लिए वह अच्छा ही रहेगा। दुनिया में कुछ तो ऐसे मुक्त पुरुष रहने चाहिए, जो दुनिया के सामने चिरकालीन मूल्य रखें!"

दूसरे दिन प्रातःकाल विनोबाजी मीनाक्षी-मन्दिर में गये। करीब १५ साल पहले यहाँ के गाँधी-भक्त नेता स्व० वैद्यनाथ अय्यर के प्रयत्नों से मीनाक्षी माता का दर्शन हरिजन हिंदुस्तान में पहली बार कर सके थे। मंदिर से लौटते वक्त विनोबाजी स्व० अय्यर के घर पर गये, जहाँ उनकी वृद्ध पत्नी तथा कुटुम्बियों ने उनका स्वागत किया। वहाँ पर विनोबाजी ने कहा, "दक्षिण में उत्तर से आने वाले यात्री मीनाक्षी, रामेश्वरम्, चिदंबरम् एवं श्रीरंगम्; ये चार स्थान अवश्य देखते हैं। ऐसा प्राचीन मंदिर हरिजनों के लिए खोलना हो, तो सबका हृदय-परिवर्तन किये बिना वह संभव नहीं था। इसमें कोई शक नहीं कि वैद्यनाथ बाबू के दिल में थोड़ा भी कच्चापन रहता, तो यह मंदिर हरिजनों के लिए नहीं खुलता। इसलिए मीनाक्षी के स्मरण के साथ वैद्यनाथजी का स्मरण भी लाज़िमी है। हरिजनों के लिए मंदिर तो खुल गया, लेकिन उनके लिए जमीन नहीं खुली। अब भूमिहीनों को जमीन दिलानी होगी, जिनमें हरिजन बहुत होते हैं। वैद्यनाथजी ने जो काम किया, उसीका यह दूसरा रूप है। हम आशा करते हैं कि उनके लड़के इस काम में योग देकर अपने पिता की विरासत ठीक सम्हालेंगे।"

वैद्यनाथजी की वृद्धा पत्नी टूटी-फूटी ही क्यों न हो, पर हिन्दी में बोल रही थीं, इसकी विनोबाजी ने बड़ी सराहना की।

मदुरा की प्रार्थना-सभाओं में पचहत्तर हजार से अधिक जनता उपस्थित थी। मौन में इतनी शांति रही कि विनोबाजी ने कहा कि 'लगता है कि यहाँ कोई आदमी ही नहीं है।' नगर में पाँच हजार 'गीता-प्रवचन' बेचे गये थे। उन पर दस्तखत करने का कार्यक्रम, जिसे विनोबाजी 'प्रेम-बाजार' कहते हैं, करीब चार घंटे तक चलता रहा। १८०० व्यक्तियों ने दस्तखत लिये। दूसरे दिन रात को सवा नौ बजे तक वह कार्यक्रम चलता रहा। विनोबाजी के नित्यक्रम में रात को आठ बजे प्रार्थना, इसके बाद मौन रहता है। प्रार्थना के बाद वे तुरंत सो जाते हैं, क्योंकि उनका जागने का समय है, प्रातः ढाई बजे का। परंतु उस दिन वह नियम कायम नहीं रह सका। हस्ताक्षर लेने वाले व्यक्तियों की लंबी कतार खड़ी थी। सिंधी कवि दुखायलजी, जो इन दिनों यात्रा में साथ थे, खंजेड़ी के साथ जोशीले गीत गा रहे थे और विनोबाजी हस्ताक्षर कर रहे थे। हस्ताक्षर में मदुरा ने उच्चांक हासिल किया है। प्रार्थना-प्रवचन में विनोबाजी ने मदुरावासियों से अपील की कि वे उत्तम हिंदी सीख कर, तमिलनाड़ की प्राचीन संस्कृति की अच्छाई उत्तर भारत में ले जायँ, जैसे एक जमाने में शंकर, रामानुज आदि ने संस्कृत के जरिये दक्षिण के विचार का उत्तर में प्रचार किया था।

मदुरा जिले के ग्रामदानों की संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है। सत्तावन् की प्रभात तमिलनाड़ में नवीन आशा का संदेश ले आयी है। चारों ओर ग्रामदान की हवा तेजी से फैल रही है। ग्रामदानी गाँव 'वेविडमसपुर' की जनसंख्या एक हजार है। गाँव नहर के किनारे होने के कारण सौ एकड़ तरी तथा ४०० एकड़ खुश्की जमीन है। नहर का पानी पिये हुए लहलहाते धान के हरे खेत गाँव के वैभव का प्रदर्शन कर रहे थे। विनोबाजी कहते हैं कि धान के खेतों में जो मृदुता दीखती है, वह दूसरे खेतों में नहीं दीखती है। इस मृदुता का असर जीवन पर भी होता होगा। उस गाँव को लोगों ने दो साल तक ग्रामदान के बारे में सोच कर पूरे विचार के साथ ग्रामदान दिया। गाँव में शिक्षित लोग भी हैं और गाँव बड़ा जागृत है। दोपहर में गाँव वाले विनोबाजी से मिलने आये थे। उन्होंने ग्रामदान के कारण पैदा होने वाला कर्ज, शादी, तालीम, जमीन का इन्तजाम, उद्योग, कानून आदि सभी विषयों पर चर्चा की, जिससे विनोबाजी को बहुत खुशी हुई। विनोबाजी ने गाँववालों से कहा कि "आपको आसपास के गाँवों में ग्रामदान का प्रचार करना चाहिए। भजन गाते हुए आपकी टोली निकलनी चाहिए। दूसरे गाँववालों से कहिये कि हमने ग्रामदान की मिठाई खायी, आप भी खाइये। उनके सब सवालों का जवाब भी आप दे सकेंगे, जैसा अभी हम दे रहे हैं। आप दही हैं, आपको समाज-रूपी दूध में मिल जाना है और उसका दही बनाना है।" गाँव में अभी कुछ चरखे चलते हैं, गाँववालों ने अपने परिश्रम से, बिना किसी बाहर की मदद के स्कूल की इमारत भी बना ली है। वेविडसपुर के आसपास के तीन चार गाँवों में ग्रामदान हुआ है। इन दिनों रास्ते में कोई न कोई ग्रामदान का गाँव आता ही है और अपने प्रेम से विनोबाजी को चंद मिनिट रोक लेता है।

ग्रामदानी गाँवों में सरकारी मदद

ग्रामदान के बारे में हम एक बात कहना चाहते हैं। उन्हें बाहर से मदद देने का प्रयत्न जरूर हो, लेकिन महत्त्व की चीज वह नहीं है। ग्रामदान का मुख्य वैभव इस बात में है कि गाँव के सब लोग मिल कर गाँव का स्वराज्य स्थापित करते हैं। सरकार आज इन गाँवों को मदद देने की सोच रही है, यह ठीक है; क्योंकि वह इससे उदासीन रह नहीं सकती। समाजवादी रचना मानने वाली सरकार व्यक्तिगत स्वामित्व मिटा देने वाले गाँवों का विरोध कर नहीं सकती!

लेकिन सरकारी मदद से भय यह है कि गाँव के लोग यह समझ बैठेंगे कि अब ऊपर से खूब मदद हम पर बरसेगी। लेकिन भगवान् भी बारिश बरसाता है, तो भी हमारी मिहनत से ही उससे फसल मिलती है। इसलिए संपत्ति-दान, सरकार और दूसरे लोग, इनसे मदद भले मिले; लेकिन सभी आलसी बने रहें, तो उसके कारण हमारा नुकसान होने वाला है। सरकार से हमारा बहिष्कार नहीं है। वह हमसे टैक्स लेती है, तो वह उसे वापस करती है। वह उससे दूसरे रूप में लेने में हमें कोई आपत्ति नहीं है। हमें सरकारें ही मिटा देनी हैं, लेकिन जब वे मिटेंगी, तब मिटेंगी, परंतु तब तक उनसे असहयोग करके मदद नहीं लेनी है, ऐसी बात नहीं। लेकिन यह मदद हम अपनी शर्त पर ही लेंगे, अन्यथा नहीं।

वेरय्युर, मदुरा, २४-१२-५६ —विनोबा

www.vinoba.in

पोला जनतंत्र !

(विनोबा)

पं० नेहरू और श्री आईक की जो वार्ताएँ हुईं, उससे शायद चंद दिनों के वास्ते दुनिया को थोड़ी शांति मिल जाय, परंतु आज दुनिया भर में जो दस-पाँच लोग हैं, अगर उनकी अकल ठिकाने रही, तो हम सब सुरक्षित हैं; पर यदि उनका ही कहीं स्क्रू ढीला हो गया, तो सारा मामला ही खतम है ! सारी दुनिया को वे आग लगा सकते हैं। यह बात हम दुनिया के लिए खतरनाक समझते हैं कि चंद लोगों के हाथ में दुनिया का भला या बुरा, दोनों करने की ताकत हो। इसलिए जिस तरह आज डेमोक्रेसी बनी है, वैसी डेमोक्रसी से दुनिया का हिंसा से छुटकारा होगा, ऐसा हम नहीं मानते हैं। आज ५१ के मत से फैसला होता है और उनका ४९ पर राज्य चलता है। अब ५१ लोगों के पास हमेशा सत्य होता है और ४९ लोगों के पास हमेशा असत्य होता है, ऐसा तो नहीं कह सकते हैं। इसलिए मेजॉरिटी के पास सत्य का बल होता है, ऐसी कोई निश्चित बात नहीं है। सत्य हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता है। ५१ लोगों के पास बुद्धिमत्ता ज्यादा है और ४९ के पास कम होती है, ऐसा भी नहीं कह सकते और उन ५१ लोगों की ४९ लोगों के साथ कुश्ती रखी जाय, तो ५१ लोग ही जीतेंगे ४९ लोग हारेंगे, ऐसा भी नहीं कह सकते हैं। हम पूछते हैं कि उन ४९ से बढ़कर कौन चीज उन ५१ में है, जिससे ५१ का राज्य चले और दूसरे का न चले ? ५१ की संख्या में, ४९ संख्या की तुलना में कोई ज्यादा शक्ति नहीं है। फिर भी वे राज्य कैसे चलायेंगे। जब उस संख्या में स्वयमेव अपनी ताकत नहीं है, तो राज्य कैसे चलेगा ? इसलिए वे राज्य चलाने के लिए शस्त्र-सज्जित होते हैं, सैन्य रखते हैं। राज्य चलाने वाले पुराने राजाओं के पास जो सत्ता थी, वही सत्ता आज उनके पास है। राजा की मर्जी प्रजा पर कैसे लादी जाय ? सैन्य-बल से ! डेमोक्रेसी में मेजॉरिटी की 'विल' (इच्छा) मायनॉरिटी पर कैसे लादी जाय ? लश्कर के बल से ! दोनों व्यवस्थाओं में लश्कर का बल समान अंश में है। जब तक राज्य के लिए बल सेना का रहेगा, तब तक राज्य-व्यवस्था किसी भी प्रकार की होगी, तो भी वह एक ही ढंग की होगी। उसमें कोई ज्यादा फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। ये लोग क्या डेमोक्रेसी की बातें करते हैं ! हिटलर भी बिलकुल डेमोक्रेटिक प्रोसेस (पद्धति) से चुन कर आया था और उधर जर्मनी में जो राज्य चला था, उसको भी डेमोक्रेसी का एक प्रकार ही कहते थे। जर्मनी की बात छोड़ दीजिये। प्रेसीडेण्ट रूजवेल्ट चार-चार बार अमेरिका में चुन कर आया। मेरा खयाल है कि आखिर मर गया, इसलिए छूटा, नहीं तो फिर से चुना जाता ! जो सत्ता राजाओं के हाथ में थी, उससे बहुत ज्यादा सत्ता उनके हाथ में थी।

डेमोक्रेटिक प्रोसेस में जो देश का प्रधान मंत्री चुना जायेगा, वही अपनी कैबिनेट भी तय करेगा। जैसे राजा का दरबार होता था, वैसा यह भी एक दरबार ही हो गया। यह इसलिए हुआ कि राज्य के खिलाफ जब डेमोक्रेसी आयी, तो उस डेमोक्रेसी ने राज्यसत्ता के दोष भी उठाये, क्योंकि राजा और उनके चुने हुए सरदारों की एक टीम थी। इस तरह माना गया कि हमारी भी टीम यदि नहीं बनेगी, तो राज्यसत्ता के खिलाफ हम टिक नहीं सकेंगे। इसलिए कैबिनेट 'चुनी' नहीं जायगी ! जो मुखिया होगा, वही तय करेगा। अभी इङ्गलैंड की पार्लमेण्ट का तमाशा देखा ही गया। दुनिया में सबसे श्रेष्ठ पार्लियामेंटरी डेमोक्रेसी अगर कहीं चलती है, तो वह इङ्गलैंड में चलती है, ऐसा माना जाता है। वहाँ जो विरोधी पक्ष है, उसमें और सत्ताधारी पक्ष में ५०-६० वोट का ही अंतर है। ऐसा मजबूत विरोधी पक्ष यहाँ कब बनेगा और बनेगा कि नहीं, यह हम नहीं जानते हैं। परंतु इङ्गलैंड में इतना मजबूत, बलवान् विरोधी पक्ष होते हुए भी उसकी कोई परवाह किये बिना, उससे कन्सल्ट (राय) किये बिना दूसरे राज्यपर हमला करने का इङ्गलैंड की सरकार ने तय कर लिया था। वहाँ के विरोधी पक्ष उस अन्याय को रोकने में बिलकुल असमर्थ साबित हुए। वे चिल्लाते रहे और उन्होंने खूब कस कर विरोध भी किया। यह इङ्गलैंड के लिए गौरवास्पद बात है कि उसने अपनी सरकार के गलत काम का कस कर विरोध किया। परंतु अपने राज्य की तरफ से जो अन्याय होता था, उसको वे रोक नहीं सके। आखिर वह रुक गया, क्योंकि कुल दुनिया का मत विरुद्ध में था। उसका एक प्रेशर (दबाव) आया। यह सब मैं इसलिए कह रहा हूँ कि पाँच साल के लिए ही सही, पर आज जो राजसत्ता बनती है, वह पुरानी राजसत्ता से मजबूत होती है। इसलिए दुनिया में शांति तब तक नहीं हो सकेगी, जब तक हम इस केन्द्रित राज्य-व्यवस्था को खत्म नहीं कर सकेंगे और वह तब तक नहीं होगा, जब तक जनशक्ति निर्माण नहीं होगी। सरकार अगर ग्रामोद्योगों को संरक्षण देती, तो हिंदुस्तान में सरकार खूब अच्छी तरह चलती। परंतु हमको खुशी है कि इस तरह का संरक्षण वह नहीं दे रही है, इसलिए जनशक्ति बनाने की बात हमें सूझती है ! नहीं तो हमें कहाँ यह सूझता ? हम सोचते कि सरकार संरक्षण दे रही है, कानून से काम हो रहा है, तो चलो रे, हम भी उस काम में मदद दें और यद्यपि जनशक्ति बनाने की जरूरत हमें विचार में महसूस होती, तो भी न हम उसे बनाने में समर्थ होते, न वह बात हमें सूझती ! परंतु हमें उसका मौका मिला, यह बड़ी सौभाग्य की बात माननी चाहिए !

(चिन्नमन्नूर, मदुरा, २३-१२-'५६)

प्रस्ताव या कार्यकर्ताओं का संकल्प ?

(त्रिलोकचंद)

सर्व-सेवा-संघ ने पलनी की सभा में तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति का जो निर्णय किया, उससे आन्दोलन में काम करने वाले कार्यकर्ताओं को बड़ा उत्साह एवं आश्चर्य भी हुआ। उत्साह तो इसलिए कि संघ का यह कदम आन्दोलन को एक नया मोड़ देने में समर्थ होगा। अब आंदोलन गाँव-गाँव से उठेगा और वह जन-आंदोलन बनेगा तथा उससे वास्तविक लोकशक्ति प्रकट होगी, जिससे नव-समाज-रचना का स्वप्न साकार होगा।

किन्तु आश्चर्य इसलिए हुआ कि सर्व-सेवा-संघ ने यह निर्णय यकायक ले लिया। इस आन्दोलन में हजारों कार्यकर्ता लगे हुए हैं, उनसे पूछा तक नहीं गया कि अब अमुक तिथि से तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति का यह कदम उठा लेना चाहिए। हमारे आन्दोलन की श्रद्धा लोकनीति पर है और हम प्रभावशाली लोकमत का निर्णय करना चाहते हैं, परन्तु इतना महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने के पूर्व कार्यकर्ताओं की, भूदान-संयोजकों की राय लेना भी वे ठीक नहीं समझते। क्या इसे अलोकतंत्रात्मक निर्णय नहीं कहा जा सकता ? पलनी में बाबा ने तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति के बारे में अपना विचार दिया और सर्व-सेवा-संघ ने घोषणा की कि अब जिले तंत्र एवं निधि-मुक्ति के लिए घोषणा करते जायँ। अच्छा होता कि आगामी मई में जब सर्वोदय-सम्मेलन में कार्यकर्ता एकत्रित होते, तो वहाँ कार्यकर्ता स्वयं घोषणा करते कि अब हम लोग तंत्र-मुक्त और निधि-मुक्त होना चाहते हैं। यदि बाबा की साक्षी में सब कार्यकर्ता स्वप्रेरित निर्णय सुनाते, तो वह वातावरण कोटि-कोटि लोगों को नयी प्रेरणा देने वाला होता और कार्यकर्ताओं में एक नया आत्मविश्वास जागृत होता। वह कार्यकर्ताओं का अपना निर्णय कहलाता। यह निर्णय तो ऐसा हो गया कि सर्व-सेवा-संघ ने निश्चय कर लिया है, इसीलिए कार्यकर्ताओं को इसे क्रियान्वित करना ही है। ऐसा लगता है कि हम लोग केवल लोकशाही की बात ही करते हैं और कार्य-रूप में अन्यथा आचरण करते हैं !

मेरे उपरोक्त कथन का यह अर्थ न लगाया जाय कि मैं इस निर्णय का विरोधी हूँ। भूदान-आन्दोलन में श्रद्धा रखने वाला कोई भी कार्यकर्ता ऐसा नहीं होगा, जो इस कदम का अभिनन्दन नहीं करेगा। परंतु यदि कार्यकर्ताओं की स्वयं की यह सामूहिक घोषणा होती, तो वह तरीका संभवतः अधिक सौम्य और प्रेरक होता। सर्व-सेवा-संघ ने यह गुंजाइश पैदा कर दी है कि अन्य संस्था या विचारवाले, जो इसमें भाग लेते हैं, वे यह सब सोच सकते हैं कि "कार्यकर्ताओं की यहाँ पूछ नहीं है। कार्यकर्ताओं को वे यहाँ एक सिविल सर्विस के रूप में मान कर चलते हैं। सर्व-सेवा-संघ ने निर्णय ले लिया है, भूदान-समितियों को वह परिपत्रित हो जायगा। भूदान-समितियाँ सब कार्यकर्ताओं को सूचित कर देगी। एक तरह से नोटिस 'सर्व' कर देंगे। कार्यकर्ताओं के व्यक्तित्व और सम्मति का सम्मान यहाँ नगण्य है।"

जहाँ तक सर्व-सेवा-संघ की वैधानिक स्थिति से संबंध है, यह निर्णय ठीक है, क्योंकि वह आन्दोलन चलाता है, भूदान-समितियों को वही नियुक्त करता है और वह आर्थिक सहायता देता है। इसलिए वह कुछ भी निर्णय ले सकता है। परन्तु जिस विचार की भूमिका पर यह आन्दोलन चल रहा है, उसमें कार्यकर्ता सर्वोपरि हैं, वह चाहे किसी भी स्थिति में इस आन्दोलन में काम कर रहा हो। हजारों कार्यकर्ता क्रान्ति व नव-समाज-रचना की भावना से इस आंदोलन में दाखिल हुए हैं। इसलिए हर कार्यकर्ता की राय का महत्त्व है, क्योंकि वह इस प्रकार आन्दोलन का एक महत्त्वपूर्ण घटक है। इसलिए वैधानिक स्थिति (Dejure) की अपेक्षा वास्तविक स्थिति (Defacto)

www.vinoba.in

अधिक मान्य एवं प्रामाणिक होती है। फलतः कार्यकर्ताओं का स्वनिर्णय ही सब परिस्थितियों में अच्छा रहता। यह भी नहीं कहा जा सकता कि कार्यकर्ता इसका स्वागत नहीं करते, क्योंकि कार्यकर्ताओं ने तो इसका प्रारंभ पटना आदि स्थानों पर कर ही दिया था। उसी तरह भूदान-समिति के जिला-संयोजकों को ही यह अवसर दिया जाता कि वे पटना के भाई विद्यासागरजी की तरह घोषणा* करते। पूज्य जनों की प्रेरणा का और जो वातावरण बन रहा था, उसका यहीं स्वाभाविक फलित आना अवश्यम्भावी था। अतः मेरा निवेदन केवल इतना ही है कि यह निर्णय हजारों कार्यकर्ता के स्वयं के मुख से स्व-प्रेरित संकल्प के रूप में निकलता, तो हमारे कार्य को एक अलौकिक शक्ति प्राप्त होती। वही तरीका अधिक सौम्य व लोक-तंत्रात्मक होता। इससे जो सामूहिक शक्ति प्रकट होती, उससे सारे देश में उत्साह का एक नवीन वातावरण बनता। जब हम इस आन्दोलन द्वारा एक सशक्त लोकनीति के निर्माण में निष्ठा रखते हैं, उस संदर्भ में कार्यकर्ताओं की सम्मति को उपेक्षणीय न माना जाता, तो अच्छा होता। मुझे आशा है कि गुरुजन मेरी इस स्पष्टोक्ति की धृष्टता के लिए क्षमा करेंगे।

मैं अपनी श्रद्धा और विश्वास को एक बार फिर दोहराना चाहता हूँ कि सर्व-सेवा-संघ का यह कदम सामाजिक और महत्त्वपूर्ण है। हम सब लोग सम्पूर्ण शक्ति से इसे सफल बनाने में कृतसंकल्प हैं। परन्तु उस हालत में यह सर्व-सेवा-संघ का न कहला कर कार्यकर्ताओं का निर्णय कहलाता, जो कि हमारे आन्दोलन की भावना के सर्वथा उपयुक्त होता। †

---

* देखें, 'भूदान-यज्ञ,' ता० ५।१०।५६ † इस पर पू० दादा की टिप्पणी द्रष्टव्य है, पृष्ठ ६। –सं०

भूदान-आंदोलन के बढ़ते-चरण

बिहार

—संथाल परगना जिले के सोरठ थाने में प्राप्त समस्त भूमि १८ अप्रैल तक भूमिहीनों में वितरित कर देने का निश्चय ५ जनवरी की बैठक में किया गया। संपत्तिदान, भूदान प्राप्ति की योजनाएँ भी बनायी गयीं।

—बिहार-खादी-ग्रामोद्योग संघ, कोइलख की ओर से सर्वोदय-सेवक बनाने एवं ग्रामोद्योग के प्रसार का कार्य तेजी से चल रहा है।

—अखिल भारत-सर्व-सेवा-संघ के तत्त्वावधान में सर्वोदय-पक्ष के युवकों और विद्यार्थियों का शिविर २८ दिसम्बर '५६ से ३१ दिसम्बर '५६ तक बिहार प्रान्त के खादीग्राम में सम्पन्न हुआ। शिविर का उद्घाटन करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि भारतीय युवकों और विद्यार्थियों का सम्प्रति एक साल के लिए दूसरे कार्य स्थगित कर भू-क्रान्ति में आ जुटना ही देश की भूमि-समस्या का एक-मात्र निराकरण है। इस अवसर पर सर्वोदय के अन्य तत्त्व-चिंतक श्री दादा धर्माधिकारी, श्री धीरेन्द्र मजूमदार, श्री शंकरराव देव, श्री नवकृष्ण चौधरी, श्री नारायण देसाई, सुश्री विमला बहन आदि ने अपने भाव-प्रवण उद्गार सर्वोदय के विभिन्न पक्षों और भावी कार्यक्रम के निर्देशन आदि पर व्यक्ति किये। विमलाबहन ने छिन्दवाडा के अल्पवयस्क भूदान-पदयात्रियों के बारे में अपना विशिष्ट अनुभव सुनाया। इस अवसर पर १९५७ के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम का निर्णय लिया गया। शिविर में सर्वोदय-नेताओं के सिवा विभिन्न प्रान्तों के ५३ युवकों ने भाग लिया और शिविर का उपसंहार सन् ५७ के भू-क्रांति के रूप में सम्पन्न हुआ। (१) छात्रों और युवकों का सामूहिक-पदयात्रा के लिए संगठन करना, (२) विद्यार्थियों और युवकों को सामूहिक पदयात्रा द्वारा सर्वोदय-सम्मेलन में पहुँचने के लिए उत्साहित करना, (३) छात्रों में संपत्ति-दान का व्यापक प्रचार करना तथा (४) विद्यार्थियों को साहित्य-प्रचार के लिए प्रोत्साहित करना, यह वह कार्यक्रम है।

उत्तर प्रदेश में सघन पदयात्रा

गोरखपुर—ता० १३ से २७-१२-५६ की अवधि में ९३२ मील का परि-भ्रमण करते हुए पदयात्री १८० गाँवों में पहुँचे। ५९ गाँवों के ११० दाताओं से ५१ एकड़ भूमि और २०९ सज्जनों से वार्षिक ६६०) व ४४।९ अन्न के सम्पत्ति-दान-पत्र मिले। 'भूदान-यज्ञ' के १२ ग्राहक बने। १२७) का सर्वोदय-साहित्य बिका।

बाराबंकी—१७ से २४ दिसम्बर की अवधि में ६५६ मील की पदयात्रा करते हुए भूदान-कार्यकर्ता २७९ गाँवों में पहुँचे। १०६ गाँवों के १२५ दाताओं द्वारा ८७ एकड़ भूमि और ३४८ सज्जनों से वार्षिक १६२) व ९६९ अन्न के सम्पत्ति-दान-पत्र मिले। ७ भाइयों ने नकद ६६) साधन-दान-स्वरूप दिये। 'भूदान-यज्ञ' के ३५ ग्राहक बने। २९१) का सर्वोदय-साहित्य बिका। २५७ सार्वजनिक सभाएँ हुईं।

इलाहाबाद—२१ नवम्बर से २० दिसम्बर तक की अवधि में १४५१ मील की पदयात्रा करते हुए ४२१ गाँवों में भूदान-सन्देश पदयात्रियों ने पहुँचाया। ५३ गाँवों के १२१ दाताओं द्वारा २६८ बीघा भूमि और ६५ सज्जनों से वार्षिक ५९८) के सम्पत्ति-दान-पत्र मिले। 'भूदान-यज्ञ' के २६ ग्राहक बने। ६१६) का सर्वोदय-साहित्य बिका। ६९९ बीघा भूमि १६२ भूमिहीन परिवारों में वितरित की गयी। ७२ भाइयों ने समय-दान-पत्र भरे तथा ७ सज्जनों ने जीवनदान दिया।

उत्तर-प्रदेश की छह कमिश्नरियों में विगत चार महीनों से चालू सघन पद-यात्राएँ जन-जीवन में प्रतियोगिता के बदले सहयोगिता, लेने की जगह देने, अधिकार-लिप्सा के स्थान पर दायित्व-निर्वाह तथा स्वार्थपरता के मुकाबले त्याग-शीलता का अभ्यास और आकर्षण पैदा करती हुई निरन्तर वर्धमान है। और भी तीन कमिश्नरियों में भूदान-सन्देश-प्रसार के लिए पदयात्री-टोलियाँ निकलने वाली हैं। उपरोक्त अवधि में २५३१२ मील का पद-परिभ्रमण करते हुए ७७६५ गाँवों में भूदान-कार्यकर्ता पहुँचे। ३३८८ गाँवों के ४७१३ सज्जनों द्वारा ५२९८ एकड़ भूमि तथा ८७८१ दाताओं से वार्षिक २२१०८) व १९८०।९ अन्न के सम्पत्ति-दान-पत्र मिले। साधन-दान में १६९५) नकद प्राप्त हुए। 'भूदान-यज्ञ' के ९७८ ग्राहक बने और ९४९३) का सर्वोदय-साहित्य बिका। भूमिहीन-बन्धुओं में २०२५ एकड़ भूमि भी वितरित गयी। ४४६ सज्जनों ने समय दान-पत्र भरे तथा ४८ भाइयों ने जीवन-दान भी संकल्प प्रकट किया।

बाबा राघवदासजी की अखंड पदयात्रा की प्रगति

श्री बाबा राघवदासजी को मैनपुरी जिले में १२ पड़ावों पर १९१ दाताओं से १४१ एकड़ भूमि, २४२४) का साधन-दान मिला। उनकी उत्तर प्रदेश की अखंड पदयात्रा में मैनपुरी जिले तक कुल ४१७४६ एकड़ भूमि, ४२१५०) नकद साधन-दान, २८६०१) वार्षिक सम्पत्तिदान मिला। यह कुल दान ८२७१ दाताओं द्वारा प्राप्त हुआ है।

इटावा जिले की १४५ मील की यात्रा में १६ पड़ावों पर ३३४ दाताओं से ५१७ एकड़ भूमि, २२७७) का साधन-दान और २४०१) का संपत्ति-दान मिला। ६८७)की साहित्य-बिक्री हुई। मथुरा, आगरा, एटा, मैनपुरी और इटावा जिलों की यात्रा में लोग प्रतिदिन हजारों की तादाद में अत्यन्त उत्सुकता से उमड़ पड़ते हैं।

मध्यप्रदेश

मंदसौर जिले की गरोठ तहसील में सामूहिक पदयात्रा और कार्यकर्ता-शिविर का आयोजन सम्पन्न हुआ, यह आयोजन जन-आधारित निधि द्वारा स्वयं-प्रेरणा से ही आयोजित किया गया था। उद्घाटन श्री पूर्णचन्द्रजी जैन तथा सभापतित्व श्री काशिनाथजी त्रिवेदी ने किया। श्री देवेन्द्रकुमारजी गुप्ता भी उपस्थित थे। अनेक बाधाओं के बावजूद २५ कार्यकर्ताओं की पाँच टोलियों ने ७० ग्रामों में भूदान का संदेश फैलाया, जिससे ग्रामीण जनता में पर्याप्त जागृति हुई। २०० बीघा भूमिदान, १२५०) का सम्पत्तिदान तथा लगभग १०००) रु० की साहित्य-बिक्री हुई। इस कार्यक्रम से तहसील में भूदान का एक अच्छा वातावरण तैयार हो गया है।

सतना जिले के अन्तर्गत मैहर तहसील के अमदरा कानूनगो सर्किल के आबाद ७१ गाँवों में से ५१ गाँवों में १३ कार्यकर्ताओं द्वारा ११८ मील की सामूहिक पदयात्राएँ की गयीं, जिसमें कार्यकर्ताओं ने अपनी ८ टोलियाँ बना कर पूरे क्षेत्र में भूदान एवं सर्वोदय का संदेश पहुँचाया। इस प्रकार कार्यकर्ताओं को १८ गाँवों से ३४ दान-दाताओं द्वारा १०९ एकड़ भूमि प्राप्त हुई। ४ दाताओं ने ७३) रु० वार्षिक सम्पत्तिदान किया। १२३) की भूदान एवं सर्वोदय-साहित्य-बिक्री हुई।

दुर्ग जिले के कवर्धा शहर में संपत्ति-दान-सप्ताह मनाया गया। २०००) वार्षिक का संपत्तिदान मिला। साहित्य-बिक्री हुई। शहर के सभी स्कूलों का सहयोग रहा। हाईस्कूल के विद्यार्थियों ने टोलियाँ बना कर प्रचार-कार्य किया। राजनांदगाँव तहसील में प्रशिक्षण शाला के और डोंगरगाँव के शिक्षार्थियों के सहयोग से १० टोलियों ने सामूहिक पदयात्रा की।

---

www.vinoba.in

स्व० मंज़रअली सोख्ता !

'एकला चलो रे' इस विश्व-कवि की राह पर सचमुच अकेले ही सोख्ताजी अंत तक चलते रहे और बापू की आखिरी वसीयत-लोकसेवक-संघ-के निर्माण का प्रयत्न करते रहे ! एक बार उन्होंने मुझसे कहा था, "भूदान-यज्ञ का किसी एक जिले का काम मैं खुद उठा लूँ !" लेकिन वह न हो पाया और वे चल बसे !

हिंदु-मुस्लिम एकता की तो वे जीती-जागती प्रतिमा ही थे। करुणा और त्याग उनमें मानों मूर्तिमान हो गये थे। स्वामी सत्यानंदजी के शब्दों में 'वे दिलों के बादशाह थे।' छोटे-से-छोटा ग्रामीण और बड़ा-से-बड़ा आदमी उनके चरणों में बैठ कर उनके जीवन से अहिंसा का पाठ सीखता था। हम जिन्हें पतित मानते हैं, ऐसे सैंकड़ों को उन्होंने पावन मूर्ति के रूप में अपनाया और अपने आश्रम में उन्हें आश्रय-स्थान दिया।

बापू की बतायी हुई राह पर वे अंत तक रचनात्मक काम करते रहे। उनका सारा जीवन एक आदर्शवादी सेवक का जीवन था। वे चंदन के समान अपने को अंत तक घिसाते-घिसाते ही गये। ईश्वर उनकी-सी शक्ति हम सबको दे।

समग्र सेवा-आश्रम, रतनूपूर (जौनपुर) —शिवमूर्ति

महाराष्ट्र की सामूहिक पदयात्रा में ग्रामदान-शतक

महाराष्ट्र की सामूहिक पदयात्रा जब ठाणे जिले में पहुँची, तो ठाणे जिले का पहला शिविर १२-१३ नवंबर को बोर्डी में हुआ। आचार्य श्री भिसे द्वारा संचालित शारदाश्रम में शिविर की व्यवस्था थी। ता. ११ की रात को शिविरार्थियों के साथ स्टेशन से शिविर-स्थान तक मशालों का जुलूस निकाल कर प्रचार किया। श्री शंकरराव देव आदि के भाषण हुए। ता. १४ को यात्री-दल अपने-अपने निश्चित गाँवों की ओर पदयात्रा पर निकल पड़े। श्री शंकरराव देव ने भी कुछ प्रमुख गाँवों की सभाओं में विचार-प्रचार किया। २१ नवंबर को पालघर में श्री वैकुंठलालभाई मेहता की अध्यक्षता में समाप्ति-समारोह हुआ। पालघर, उंबरगाँव, डहाणू और वसई, इन चार तहसीलोंमें १६ पदयात्री-टोलियों ने २०१ गाँवों में प्रचार किया। ता. २२ को सारे यात्रिक वाडे गाँव में एकत्रित हुए। २३ को वहाँ शिविर हुआ। २४ से २९ नवंबर तक ठाणे जिले की पदयात्रा का दूसरा पर्व चला।

ता० ३० नवंबर को भिवंडी में नागपुर के भूतपूर्व न्यायमूर्ति और म. प्र. भूदान-बोर्ड के अध्यक्ष श्री नियोगी द्वारा समाप्ति-समारोह संपन्न हुआ। वाड़े तहसील और ठाणे जिले में कुल २३८ कार्यकर्ताओं की २५ टोलियों ने ७९५ मील की सामूहिक पदयात्रा की। ३६० गाँवों में ४०० सभाओं द्वारा भूदान-विचार समझाया। फलस्वरूप ५० दाताओं से ११८८ एकड भूदान, २१० दाताओं से २६५२) रु० सालाना और ४४ मन चावल के संपत्तिदान-पत्र, १४८ दाताओं से २२७८ रु० और १८ हल, १ बैल, ३ गायों का साधनदान मिला। एक बहन ने हाथ में की सोने की चूडी भी साधनदान के लिए दी। छात्र और शिक्षकों से छुट्टी के दिनों में श्रमदान मिले। १००० रु. की साहित्य-बिक्री हुई। भूदान-पत्रिकाओं के २७५ ग्राहक बने। १६ ग्रामदान मिले।

ता. ११ से १९ दिसंबर तक पदयात्रा कुलाबा जिले में हुई। वहाँ १०० एकड़ भूदान मिला। बाद में २० दिसंबर से रत्नागिरी जिले में पदयात्रा शुरू हुई। दापोली में दो दिन का शिविर हुआ और २८ टोलियाँ पदयात्रा के लिए निकल पड़ीं।

महाराष्ट्र में रत्नागिरि जिले में ५५, ठाणें में १६, कुलाबा में २५, नासिक में ६ और प० खानदेश में २; इस तरह केवल ३ महीने में सौ से अधिक ग्रामदान मिले हैं। रत्नागिरि में सामूहिक पदयात्रा चल रही है। और भी ग्रामदान मिलने की संभावना है।

अभी तक महाराष्ट्र में ६७१७ दाताओं से ४३३३८ एकड़ भूमिदान मिला, जिसमें से ५१७४ एकड़ भूमि १२१० परिवारों में वितरित की गयी। २३०००) का संपत्तिदान मिला।

उड़ीसा के कोरापुट जिले में दिसंबर माह में ७५, मयूरभंज में ६ तथा ढेंकानल में ९ ग्रामदान और मिले। दिसंबर अन्त तक उड़ीसा में कुल १६१० ग्रामदान हुए हैं।

संवाद-सूचनाएँ :

सर्व-सेवा-संघ दफ्तर का स्थान-परिवर्तन

—अ. भा. सर्व-सेवा-संघ का बुनियादगंज, गया स्थित दफ्तर १४ जनवरी '५७ से खादीग्राम चला गया है। इस दफ्तर से संबंधित सारा पत्र-व्यवहार निम्न पते पर किया जाय :

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ, पो० खादीग्राम, वाया जमुई, जिला-मुंगेर (बिहार) तार का पता : सर्वसेवा, जमूई (Jamooee) रहेगा। फिलहाल टेलीफोन की व्यवस्था वहाँ नहीं है। —सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री

—गांधी-स्मारक-निधि की ओर से २६ जनवरी '५७ से "गांधी-मार्ग" नामक दो त्रैमासिक पत्रिकाएँ हिंदी और अंग्रेजी में प्रकाशित हो रही हैं। गांधीजी के विचार, कार्यप्रणाली तथा इन पर विख्यात देशी-विदेशी विचारकों के लेख तथा टिप्पणियाँ प्रकाशित करना इसका उद्देश्य है। संस्थाओं के कार्य-विवरण भी इसमें प्रकाशित होंगे। वार्षिक मूल्य-हिंदी संस्करण का २) और अंग्रेजी संस्करण का ५)। गांधी-स्मारक निधि, मणिभुवन, —संपादक, "गांधी-मार्ग"
१९ लेबरनम रोड, बंबई ७.

—म० प्र० भूदान-समिति का नरसिंहपुर से प्रकाशित होने वाला साप्ताहिक पत्र "साम्ययोग" भूदान-समिति के विसर्जन के कारण २६ जनवरी ५७ से जबलपुर से प्रकाशित होगा। पत्र-व्यवहार इस पते पर करें—श्री गणेश प्रसाद नायक, ७९५ पूर्वी निवॉर्ड गंज, दीक्षितपुरा, जबलपुर (मध्यप्रदेश)।

विनोबाजी की पदयात्रा का कार्यक्रम

तारीख	पड़ाव	डाक-तारघर	रेल्वे स्टेशन	जिला
१८-१-'५७	ट्रिची सिटी	थेप्पाकुलम्	श्रीरंगम्	ट्रिची
१९-१-'५७	तिरुवरमूपुर	तिरुवरमूपुर	तिरुवरमूपुर	,,
२०-१-'५७	कल्लनै	—	—	तंजौर

प्रकाशन-समाचार

साहित्य-प्रचार की ज़िम्मेवारी उठाये हुए एक भाई को विनोबाजी ने लिखा है:

"तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति के साथ साहित्य-प्रचार की युक्ति जोड़ दी जाय, तो नवयुग का स्फोट निश्चित ही होगा। १९५७ हमारे पूर्ण प्रयत्न का वर्ष होगा। संगठन को तोड़ कर समाज को सौंप दिया। उसके साथ साहित्य-प्रचार में लगे हुए लोगों का काम बढ़ जाता है।

"सर्वोदय-साहित्य के लिए हर तहसील में एक स्थान होना चाहिए, जहाँ से संचालक (भूदान-कार्यकर्ता) उसे गाँव-गाँव और घर-घर पहुँचा सकेंगे।"

सभी ज़िला-सेवकों, लोक-सेवकों और भूदान-कार्यकर्ताओं से प्रार्थना है कि साहित्य-प्रचार की जो 'युक्ति' उनके मन में आये, वह हमें लिखने का कष्ट करें।

—अ० भा० काँग्रेस के ६२ वें इंदौर-अधिवेशन की खादी व ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी में कुल ७५७) की साहित्य-बिक्री हुई। सबका काफी सहयोग मिला।
राजघाट, काशी —संचालक, सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	सियार से घोड़ा कैसे बना !	विनोबा	१
२.	करुणा की परिसीमा !	,,	२
३.	चलता मुसाफिर ही पायेगा, मंजिल और मुकाम रे !	—	३
४.	नयी तालीम का पदार्थ-पाठ	भवानीसिंह	३
५.	समय की चुनौती	विनोबा	४
६.	सत्तावन् की प्रार्थना !	आशादेवी आर्यनायकम्	५
७.	पंचायतें कैसे होनी चाहिए ?	विनोबा	६
८.	सर्वोदय की दृष्टि :		
	१. ये निर्णय सचमुच प्रातिनिधिक हैं	दादा धर्माधिकारी	६
	२. काँग्रेसके चुनाव-घोषणापत्रकी मंजूरशुदा तरमीम	लक्ष्मीनारायण भारतीय	७
९.	विश्वशांति कैसे आ सकती है ?	जो० कॉ० कुमारप्पा	७
१०.	हमारी ग्रहनीति बनाम विदेशनीति	रामाधार भाई	८
११.	तमिलनाड़ की क्रांतियात्रा से—	निर्मला देशपांडे	९
१२.	पोला जनतंत्र !	विनोबा	१०
१३.	प्रस्ताव या कार्यकर्ताओं का संकल्प ?	त्रिलोकचंद	१०
१४.	भूदान-आंदोलन-समाचार, संवाद-सूचनाएँ आदि	—	११-१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं०४१, राजघाट, काशी।

www.vinoba.in